Jan 2026

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

दावत का न ख़त्म होने वाला असर

"दावत क़ौमों और जमाअतों के हक़ में "आब-ए-हयात (अमृत)" है, जिसने इसका कोई जुरआ (घूंट) पी लिया, उस पर मौत हराम है। अगर मुसलमान इस दावत के अलमबरदार हैं और उन्होंने अपने वजूद को इस दावत के वजूद में इस तरह गुम कर दिया कि उनकी ज़िन्दगी इस दावत की ज़िन्दगी की तरह हो गई तो फ़ना उनके लिए मोहाल और बक़ा उनके लिए मुक़द्दर है।"

मिट नहीं सकता कभी मर्द-ए-मुसलमां कि है
उसकी अज़ानों से फ़ाश सर-ए-कलीम व ख़लील

(निशाने राह: १७)

मुफ़क्किर-ए-इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

आयत-ए-दावत की गहराई और गीराई

“क़ुरआन करीम का यह ऐजाज़ है कि उसने दावत के तरीक़—ए—कार के हुदूद मुक़र्रर नहीं किए और यह काम दाई की क़ुव्वत—ए—तमीज़ और अक़्ल—ए—सलीम पर छोड़ दिया है। इस बात का फ़ैसला कि कब और किस वक़्त कौन—सा तरीक़—ए—कार इख़्तियार किया जाए, उसकी तरफ़ ख़ुद दाई का ज़ौक़ और अक़ीदा रहनुमाई करेगा और उसकी दीनी फ़िक्र जो उसके एहसासों व आसाब पर हुक्मराँ है, वह ख़ुद तरीक़—ए—कार का इंतिख़ाब करेगी। क़ुरआन करीम ने सिर्फ़ एक वसीअ हिसार (घेरा) क़ायम कर दिया है, जिसके अंदर दावत—ए—दीन की पूरी रूह (स्प्रिट) समा गई है। वह आयत यह है:

اُدْعُ إِلٰى سَبِيْلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَالْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَجَادِلْهُم بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ ۚ إِنَّ رَبَّكَ هُوَ أَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَبِيلِهِ وَهُوَ أَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِينَ

“ऐ पैग़म्बर! लोगों को दानिश और नेक नसीहत से अपने परवरदिगार के रास्ते की तरफ़ बुलाओ और बहुत ही अच्छे तरीक़े से उनसे मुनाज़रा करो। जो उसके रास्ते से भटक गया, तुम्हारा परवरदिगार उससे ख़ूब वाक़फ़ि है और जो रास्ते पर चलने वाले हैं उन्हें भी ख़ूब जानता है।”

इस आयत—ए—करीमा की रोशनी में दोनों बातें पूरी तरह अयाँ हैं, एक, अल्लाह की तरफ़ बुलाने वाले दाई को कितनी आज़ादी है और किस दर्जे की पाबंदी है; कहाँ तक वह जा सकता है और किस हद से आगे क़दम बढ़ाना ममनूअ है। जहाँ तक दावत की वुसअत और दाई की आज़ादी का तअल्लुक़ है, वह इस ताबीर से वाज़ेह है कि (अपने रब के रास्ते की तरफ़ बुलाओ) इस आयत में यह नहीं फ़रमाया गया कि ईमान की तरफ़ दावत दो, या सहीह और सच्चे अक़ीदे की तरफ़ बुलाओ, या नमाज़ क़ायम करने की दावत दो, या अख़्लाक़—ए—हसना इख़्तियार करने की तरग़ीब दो, या इंसानियत के एहतिराम की तल्क़ीन करो। यह सब नहीं कहा गया, मगर ये तमाम बातें (अपने रब के रास्ते की तरफ़ बुलाओ) में सिमट आई हैं। इस लफ़्ज़ ने फ़िक्र—ओ—अमल के आसमान खोल दिए हैं। ये आसमान भी महदूद नहीं हैं। इसमें दूसरे अदयान—ए—समावी, इंसानी ज़रूरियात, इंसानी ज़िंदगी में पेश आने वाली हाजतें, सब दाख़लि हैं। ‘बुलाओ’ का लफ़्ज़ भी किस दर्जे वसीअ मआनी पर हावी है। इसमें न यह क़ैद है कि वअज़—ओ—तक़रीर के ज़रिये बुलाओ, न यह कि तहरीर के ज़रिये दावत दो, न यह कि सिर्फ़ वअज़—ओ—तलक़ीन ही का ज़रिया इख़्तियार करो। यह लफ़्ज़ ‘बुलाओ’ तमाम माने अपने दामन में रखता है और हस्ब—ए—मौक़े दाई दावत का फ़र्ज़ कभी पंद—ओ—नसाइह से, कभी वअज़—ओ—तक़रीर से और कभी तहरीर और दूसरे ज़राए—ए—इब्लाग़ से अदा कर सकता है और बुलाने का हर वह ज़रिया इख़्तियार कर सकता है जो मशरूअ, मोअस्सिर और नाफ़ेअ हो। फिर फ़रमाया: “अपने रब के रास्ते की तरफ़” इसके अलावा कोई ताबीर मुमकिन नहीं जिसमें इतनी जामेईयत और वुसअत, गहराई और गीराई एक साथ मौजूद हो। (तब्लीग—ओ—दावत का मोजिज़ाना उस्लूब: २१—२३)

मुफ़क्किर-ए-इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:01 जनवरी २०२६ ई० वर्ष:18

सम्पादकीय मण्डल

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

मुहम्मद हसन नदवी

सह सम्पादक

मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

अनुवादक

मुहम्मद सैफ़

इस्लाम में नर्म मिज़ाजी की अहमियत

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"बिलाशुब्हा जिस चीज़ में नर्मी शामिल होती है तो वह उसको ज़ीनत बख़्शती है और जिस चीज़ से नर्मी निकाल दी जाती है तो वह बेहैसियत हो जाती है।"

सही मुस्लिम: 2594

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

ग़फ़लत का अंजाम

हज़रत मौलाना मुहम्मद अहमद फूलपुरी (रह0)

उसको मिल ही नहीं सकता कभी तौहीद का जाम
जिसकी नज़रों से है पोशीदा रिसालत का मक़ाम

यूं तो उस क़ादिर-ओ-क़ यूम की रहमत है आम
पर मुक़द्द्र दर से मिला करता है तौहीद का जाम

पाले तू ख़ैर-ए-उमम होके भी है कल-अनआम
नहीं पुख़्ता तेरा ईमान, अभी तक है ख़ाम

तुझको हासिल नहीं क्यों चैन, सुकून-ओ-आराम
कुछ ख़बर है तेरी गुमराही का है यह अंजाम

अपने आक़ा की इताअत से जो ग़ाफ़िल हो गुलाम
क्यों मिले आप ही फ़रमाइये, उसको ईनाम

ज़िल्लत व ख़्वारी व रुस्वाई से तुझको क्या काम
सच बता, क्या तू नहीं हाए मुहम्मद का गुलाम

हाय क्या बात है? सोचा है कभी इसको भी
तुझसे ज़्यादा नहीं दुनिया में है कोई बदनाम

हक़ से अफ़सोस नहीं तुझको मुहब्बत कुछ भी
झुक के अब शौक़ से करता है तू बातिल को सलाम

ख़ाक में तुझको मिलाया है तेरी ग़फ़लत ने
होश में अब भी न आया, तू है हैरत का मक़ाम

इस अंक में:

अहले फ़िक्र–ओ–दावत से कुछ गुज़ारिशें............................3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तक़वा क्या है?...5

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

फ़स्ख़ व तफ़रीक़ के मसाएल..7

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

मुल्क–ए–हिन्दुस्तान तानाशाही की राह पर 9

सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

मज़हब इस्लाम की इम्तियाज़ी ख़ुसूसियत..........................11

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

इल्हाद का तूफ़ान – सबब और हल................................14

मोहम्मद नज्मुद्दीन नदवी

तहरीक–ए–नदवतुल उलमा की जामेईयत..........................16

ज़ैनुल आबदीन हाशमी नदवी

हम हैं तो ख़ुदा भी है...17

मुहम्मद मुसअब नदवी

दावत की अहमियत और उसके तक़ाज़े............................19

मुहम्मद अरमग़ान बदायूनी नदवी

सम्पादकीय

अहले फ़िक्र-ओ-दावत से कुछ गुज़ारिशें

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

दुनिया के मज़हबों में इस्लाम का एक नुमायाँ इम्तियाज़ (ख़ासियत) यह भी है कि इसमें जो एतिदाल (संतुलन) है, वह किसी दूसरी जगह नज़र नहीं आता। यह एतिदाल हर जगह नुमायाँ है, अक़ाइद (आस्था) से लेकर आमाल व कैफ़ियात तक, और फिर वसाइल–ए–तब्लीग़–ओ–दावत, उसके तरीक़ा–ए–कार और ज़िंदगी के हर शोबे में यह तवाज़ुन बड़ी खूबसूरती के साथ नज़र आता है, जो ज़िंदगी के गुलदस्ते को बड़ी खूबसूरती से सजाता है और हमेशा सारी दुनिया को खुशबुओं से महकाता रहा है।

आख़िरी उम्मत पर लाज़िम किया गया है कि वह दावत–ए–दीन का फ़रीज़ा अंजाम देती रहे। इसके लिए जगह–जगह कुरआन मजीद में हिदायतें मौजूद हैं। एक आयत में बड़ी वज़ाहत के साथ फ़रमाया गया है:

ادْعُ إِلَى سَبِيلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَالْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَجَادِلْهُم بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ

"अपने रब के रास्ते की तरफ़ हिकमत और अच्छी नसीहत के ज़रिये बुलाते रहिए और अच्छे तरीक़े से उनसे बहस कीजिए।" (सूरह नह्ल: 125)

अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की मुबारक ज़िंदगी इन्हीं कुरआनी अहकाम (आदेशों) की आईना–दार भी है और उसके मुख़्तलिफ़ पहलुओं को खोलने वाली भी है। आप (स0अ0व0) ही शारह–ए–कुरआन हैं और आप (स0अ0व0) की तफ़्सीर व तशरीह की रोशनी में की जाने वाली इसकी तशरीह व तफ़्सीर ही मोतबर है, और यह हुक्म कुरआनी है। इरशाद है:

وَأَنزَلْنَا إِلَيْكَ الذِّكْرَ لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ إِلَيْهِمْ وَلَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ

"और हमने (किताब) नसीहत आप पर इसलिए उतारी ताकि आप लोगों के लिए उन चीज़ों को खोल दें जो उनकी तरफ़ उतारी गई हैं, और शायद वे ग़ौर करें।" (सूरह नह्ल: 44)

इस आयत–ए–शरीफ़ा से भी और आँहज़रत (स0अ0व0) की सीरत से भी यह बात वाज़ेह तौर पर सामने आती है कि दावत के लिए इब्तिदाई मरहले पर "अच्छी नसीहत" को इख़्तियार किया गया है। हिकमत इसकी बुनियाद में शामिल है। आम इंसानी आबादी, जो औसत दर्जे का फ़हम रखती है, उसकी सतह को देखकर ही बात कही जाए। इसके लिए बहुत गहराई में जाना अक्सर नुक़सानदेह साबित होता है।

कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनकी अक़्ली सतह बहुत निचले दर्जे की होती है। ऐसे लोगों के लिए सादा ईमान काफ़ी है। जैसा कि एक हदीस में आता है कि एक बाँदी लाई गई, आप (स0अ0व0) ने उससे खुदा के बारे में पूछा तो उसने आसमान की तरफ़ इशारा किया। आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि इसके ईमान के लिए यही काफ़ी है।

यह इस्लाम का तवाज़ुन व एतिदाल है। किसी को उसकी अक़्ल से ज़्यादा का मुकल्लफ़ नहीं बनाया जा सकता और न उससे किसी ऐसी गहराई का मुतालबा किया जा सकता है जो उसकी अक़्ली सतह से बाहर हो। हदीस में है:

"लोगों से उनकी अक़्ल व फ़हम के मुताबिक़ बातचीत करो, क्या तुम यह चाहते हो कि अल्लाह और उसके रसूल को झुठला दिया जाए?"

इंसानों में बमुश्किल दस फ़ीसद लोग ऐसे भी होते हैं जो बड़ी गहराइयों में जाते हैं और जिनकी अक़्ली सतह बहुत बुलंद होती है। उन्हें मुत्मईन करने के लिए कहीं–कहीं बाल की खाल निकालने की और उन जुज़्इयात (हिस्सों) तक पहुँचने की ज़रूरत होती है जो आम लोगों की सतह से बहुत ऊपर होती हैं।

कुरआन मजीद में इसीलिए आम हुक्म दावत का है, अख़्लाक़ के साथ, मुहब्बत के साथ, इसे मौइज़ा–ए–हसना कहा

गया है। एक जगह यह भी इरशाद हैः

وَمَنْ أَحْسَنُ قَوْلًا مِمَّن دَعَا إِلَى اللَّهِ وَعَمِلَ صَالِحًا وَقَالَ إِنَّنِي مِنَ الْمُسْلِمِينَ

"और उससे अच्छी बात किसकी होगी जिसने अल्लाह की तरफ़ बुलाया, अच्छे काम किए और कहा कि मैं तो फ़रमाबरदारों में से हूँ।" (फ़ुस्सिलतः 33)

लेकिन वह तबक़ा जो बुलंद ज़ेहनी सतह रखता है और बाल की खाल निकालना जिसके मिज़ाज में शामिल है, उससे उसकी नफ़्सियात को समझकर, उसकी ज़बान में, उसकी अक़्ली सतह को सामने रखकर बात करना ज़रूरी है, और यही मुजादिला है। लेकिन इसमें भी हुक्म है कि वह बेहतर तरीक़े पर हो।

इंसानों में ये तीनों तबक़े मौजूद हैं। एक दाई (दावत देने वाले) के लिए ज़रूरी है कि वह अपने मुख़ातब की रिआयत के साथ बात पेश करे। अस्सी फ़ीसद बात में मुजादले की ज़रूरत नहीं होती। दस फ़ीसद लोग बेहद कमज़ोर और मामूली सतह के होते हैं। सिर्फ़ दस फ़ीसद, बल्कि इससे भी कम लोग ऐसे होते हैं जिन्हें मुत्मईन करने के लिए मुझादले की ज़रूरत पड़ती है।

तबक़ा–ए–उलमा को इसका लिहाज़ करना चाहिए। न मुजादले की नफ़ी की जा सकती है और न उसे ग़ैर–ज़रूरी क़रार दिया जा सकता है। एक तबक़े को मुत्मईन करने के लिए इसकी बड़ी ज़रूरत है और उम्मत में ऐसे अफ़राद होने चाहिए जो यह फ़रीज़ा अंजाम दें। यक़ीनन ऐसे लोग क़ाबिल–ए–क़द्र हैं, लेकिन अस्सी फ़ीसद से ज़्यादा ऐसे उलमा की ज़रूरत है जो सादे तरीक़े पर दीन को पहुँचा दें और बे–ज़रूरत सवाल–जवाब में न पड़ें। आम लोगों के लिए ये चीज़ें कभी–कभी गुमराही का सबब बन जाती हैं।

दूसरी बात यह है कि मौजूदा हालात में दीन के कामों की क़द्रदानी होनी चाहिए। यह हर तरह की असबियत से पाक हो। तब्लीग़–ओ–दावत की मुख़्तलिफ़ सूरतों पर जो बेहतर तरीक़े से इख़्तियार की जा रही हों, खुश होना इख़्लास की अलामत है, चाहे वह किसी मदरसे की तरफ़ से हो, किसी जमाअत या तहरीक की तरफ़ से हो। इसमें खींचा–तानी करना इख़्लास से हटी हुई बात है।

तीसरी बात यह कि सोशल मीडिया का इस दौर में इस क़दर ग़लत इस्तेमाल (डपेमक न्म) हो रहा है कि उससे आम तौर पर इंतिशार पैदा होता है। कम–अज़–कम तबक़ा–ए–उलमा और दीनदार समझे जाने वाले लोगों को इसका लिहाज़ रखना चाहिए कि उनकी सलाहियतों का इस्तेमाल मुस्बत और तामीरी कामों में हो। ख़ुदा न ख़्वास्ता अगर ये सलाहियतें तख़रीबी कामों और एक–दूसरे को गिराने में सर्फ़ होंगी तो समाज एक खंडहर की शक्ल इख़्तियार कर लेगा, और इससे अदा–ए–दीन की ख़्वाहिशात पूरी होंगी। उन्हें किसी बम गिराने की ज़रूरत नहीं, हम खुद उनके आलाकार बनकर समाज को बर्बाद कर लेंगे।

इन हालात में होश के नाखून लेने की ज़रूरत है। इख़्तिलाफ़ात' अपनी जगह, लेकिन बे–ज़रूरत मुख़ालिफ़त और हठधर्मी निहायत मुज़िर है। कम–अज़–कम मीडिया पर ज़रूरत इस बात की है कि उम्मत की एक अच्छी शबीह सामने आए और इस्लाम के ख़ूबसूरत गुलदस्ते की निगहबानी का फ़रीज़ा अंजाम दिया जाए, बजाए इसके कि उसके मुख़्तलिफ़ फूलों में ऐब तलाश किए जाएँ और उन्हें तोड़ने की कोशिश की जाए।

अगर हमारे नौजवान उलमा, जो बड़ी सलाहियतें रखते हैं, पूरी तरह अपनी इन सलाहियतों को दीन की तामीर व तरक़्क़ी में लगा दें, तो यक़ीनन एक ख़ूबसूरत समाज वजूद में आ सकता है, जिसकी आज सारी दुनिया को तलाश है।

ज़रूरत इस बात की है कि हम हर तरह के मफ़ादात से बुलंद होकर अल्लाह की रज़ा के लिए, दीन के फ़ायदे के लिए अपनी सलाहियतों को लगाएँ। तो यक़ीनन दुनिया भी हमारी है और आख़िरत की कामयाबी का इनहिसार भी इसी पर है। अल्लाह तआला हम सब को इसकी तौफ़ीक़ अता फ़रमाए कि हम इंसानियत के इस ख़ला को भरें और आख़िरी उम्मत में होने के नाते आलम–ए–इंसानियत के लिए ऐसा नमूना पेश करें जिससे झुलसती दुनिया में एक बहार आ जाए।

तक़्वा क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

जन्नत में दाख़िल करने वाली दो अहम सिफ़ातें:

"अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) से पूछा गया कि लोगों को सबसे ज़्यादा जन्नत में दाख़िल करने वाली चीज़ कौन–सी है? आपने फ़रमायाः अल्लाह का तक़्वा क्या है और अच्छे अख़्लाक़।" (सुनन तिरमिज़ीः 2135)

हक़ीक़त में तक़्वा क्या है का असल मतलब ही जहन्नम से अपने आपको बचाना है। अगर देखा जाए तो तक़्वा फ़ी नफ़्सिही (अपनेआप में) जहन्नम से बचने का रास्ता है। यह सबसे बड़ी चीज़ है जो आदमी को जहन्नम से बचाएगी और इसका लाज़िमी नतीजा यह होगा कि जन्नत में दाख़िल करेगी। हदीस में आता है कि तक़्वा के अंदर आदमी जिस क़द्र बुलंद मर्तबे पर फ़ाइज़ होगा, अल्लाह तआला जन्नत में उसके मरतबे को उसी क़द्र बढ़ाता चला जाएगा।

ऊपर हदीस में बयान हुआ कि तक़्वा की सिफ़त लोगों को सबसे ज़्यादा जन्नत में दाख़िल करेगी। तक़्वा एक जामेअ सिफ़त (व्यापक विशेषता) है, तमाम हराम कामों से बचना, तमाम मक्रूह कामों से बचना, यहाँ तक कि उन तमाम कामों से भी बचना जो मुबाह (सही) हैं लेकिन उनमें कुछ न कुछ हर्ज है। हदीस में भी आता है कि जिस चीज़ में हर्ज नहीं है, उसे उस चीज़ से बचने के लिए छोड़ दो जिसमें हर्ज है। कभी–कभी आदमी बहुत से काम यह कहते हुए कर लेता है कि इसमें क्या हर्ज है, और वह इसमें तावील कर लेता है, लेकिन हदीस से यह मालूम होता है कि जो यह मिज़ाज बनाएगा तो वह उन चीज़ों में पड़ जाएगा जिनमें हर्ज है और वह यक़ीनन गुनाहों में पड़ जाएगा।

तक़्वा की ज़िंदगी गुनाहों से बचने वाली और नेक आमाल करने वाली ज़िंदगी है। अक़ाइद (आस्था) से लेकर इबादात, मामलात और मुआशरत (सामाजिकता) तक हमें इस्लाम का जो निज़ाम दिया गया है, जो पूरा दस्तूर–ए–ज़िंदगी है, अगर उसे पूरा–का–पूरा इख़्तियार किया जाए तो यह आला दर्जे का तक़्वा है। तक़्वा में इसकी बातिनी सिफ़ात (आन्तरिक विशेषताएं) भी दाख़िल हैं, जिनमें बुनियादी तौर पर इख़्लास ज़रूरी है। कई बार लोगों को धोखा होता है, किसी को लोग अल्लाह का वली समझते हैं, लेकिन अगर वह सिर्फ़ लोगों के सामने दिखावा कर रहा है तो ज़ाहिर है कि वह मुनाफ़िक़ है और उसने तक़्वा की हलावत (मज़ा) ही नहीं चखी।

मज़कूरा हदीस में दूसरी अहम सिफ़त हुस्न–ए–अख़्लाक़ की बयान हुई है। इस सिलसिले में कई बार बड़ी ग़लतफ़हमी होती है। लोग सोचते हैं कि हुस्न–ए–अख़्लाक़ अच्छी चीज़ है, लेकिन शायद यह क़ुर्ब–ए–इलाही (अल्लाह से क़रीब होने) का ज़रिया नहीं। इसके मुक़ाबले में लोग क़ुर्ब–ए–इलाही का ज़्यादा असरदार ज़रिया यह समझते हैं कि आदमी ज़्यादा–से–ज़्यादा नमाज़ें पढ़े, ज़्यादा–से–ज़्यादा रोज़े रखे और ख़ूब तिलावत करे। लेकिन सच्ची बात यह है कि अल्लाह तबारक व तआला उन चीज़ों से बहुत ज़्यादा क़रीब होता है जिनमें एक बंदा अपने दूसरे भाई की फ़िक्र करे, अख़्लाक़ बर्ते, ईसार (क़ुर्बानी) से काम ले। मशहूर हदीस–ए–क़ुद्सी है कि क़यामत के दिन अल्लाह तबारक व तआला फ़रमाएगाः

"ऐ बंदे! मैं भूखा था लेकिन तुमने मुझे खाना नहीं खिलाया, मैं नंगा था लेकिन तुमने मुझे कपड़े नहीं दिए।" बंदा अर्ज़ करेगाः ऐ अल्लाह! तू तमाम जहानों का परवरदिगार है, और तुझे इन चीज़ों की ज़रूरत कैसे हो सकती थी? इरशाद होगाः मेरा फ़लाँ बंदा भूखा था, अगर तू उसे खाना खिलाता तो मुझे उसके पास पाता। फ़लाँ बंदा मोहताज था, अगर तू उसे कपड़े देता तो गोया मुझे देता।

इससे मालूम होता है कि यह काम मारिफ़त–ए–रब का एक बुनियादी ज़रिया है। इसीलिए कुछ लोग यह

बात कहते हैं कि इबादत से जन्नत मिलती है और ख़िदमत से ख़ुदा मिलता है।

महमूद ग़ज़नवी का एक क़िस्सा मशहूर है। उसकी एक बहुत ज़हीन बांदी थी, जिसकी वह बहुत क़द्र करता था और उसे अपने क़रीब रखता था। इस पर दरबार में कुछ लोगों को हसद हुआ। जब महमूद को यह अंदाज़ा हुआ तो उसने एक मर्तबा दरबार में सबको जमा करने के बाद जायदादों के बहुत–से काग़ज़ात तैयार किए। उसने यह ऐलान किया कि दरबार में जो जिस चीज़ पर हाथ रख देगा, वह उसकी हो जाएगी। यह सुनकर सब लोग दौड़े और जिसके हाथ में जो काग़ज़ आया उसने उठा लिया, मगर उस हंगामे में वह बांदी अपनी जगह खड़ी रही। महमूद ने कहाः तुमने किसी काग़ज़ पर हाथ क्यों नहीं रखा? वह बोलीः मैं आपसे एक बात पूछना चाहती हूँ, आप जो बात कह रहे हैं, उसमें कोई इस्तिस्ना (अपवाद) तो नहीं है? महमूद ने कहाः कोई इस्तिस्ना नहीं है। वह बोलीः तो मैं जिस पर चाहूँ उस पर हाथ रख दूँ? उसने कहाः हाँ। फिर वह आई और उसने महमूद ही के सिर पर हाथ रख दिया और बोलीः जब बादशाह हमारा, तो सब कुछ हमारा। यह जवाब सुनकर महमूद ने लोगों को बताया कि यही वह राज़ है जिसके सबब मैं इसे क़रीब करता हूँ। यानि कि अल्लाह ने इसे जो अक़्ल दी है, वह हर एक को हासिल नहीं।

ठीक इसी तरह जब अल्लाह किसी का हो गया तो ज़ाहिर है जन्नत भी उसकी तय है। उर्दू का एक मशहूर शेर हैः

गिला नहीं जो गुरेज़ाँ हैं चंद पैमाने
निगाह–ए–यार सलामत, हज़ार मयख़ाने

यानी इन चंद पैमानों की क्या क़ीमत है! अगर न मिलें तो न मिलें, लेकिन अगर "उनकी निगाह" सलामत है, वह मोहब्बत और तवज्जो फ़रमाते हैं, तो पैमानों की कोई क़ीमत नहीं, फिर तो हज़ारों मयख़ाने क़दमों में होंगे।

असल बात यह है कि जब अल्लाह से ताल्लुक़ मज़बूत हो गया और अल्लाह बंदे से मोहब्बत करने लगा, तो सारा काम मानो आसान हो गया। दुनिया में चाहे कितने ही सख़्त हालात आएँ, लेकिन सच्ची बात यह है कि अगर आदमी अल्लाह से सच्चा ताल्लुक़ पैदा कर ले, वह ताल्लुक़ जो हक़ीक़ी होता है, जो दिल का होता है, तो उसके लिए कोई मुश्किल, मुश्किल नहीं रह जाती। सहाबा (रज़ि0) की जिन्दगियां इस बात की बेहतरीन आईना–दार हैं। वह यह बात बिल्कुल नहीं सोचते थे कि कल आने वाले मसलों को हम कैसे बर्दाश्त करेंगे। उनका अल्लाह से ताल्लुक़ ऐसा मज़बूत था कि वे बढ़ते ही चले जाते थे।

हज़रत मूसा बिन उक़्बा (रज़ि0) का मशहूर वाक़्या है कि वह क़ैरवान फ़तह करने गए। वहाँ उन्होंने एक जगह जंगल में ख़ेमा लगाने होने का इरादा किया तो वहाँ के मुक़ामी लोगों ने मना किया कि यह जगह ख़तरे की है और यहाँ बहुत–से जंगली जानवर भी हैं। लेकिन वे बोलेः लश्कर के ख़ेमा लगाने होने के लिए यही जगह मुनासिब है और हम अपने ख़ेमे यहीं लगाएंगे। फिर वे बोलेः हम अल्लाह के नबी (स0अ0व0) के क़ासिद हैं और हम अल्लाह के दीन को लेकर आगे बढ़े हैं। हमें किसी दूसरी जगह जाकर ख़ेमा लगाने की ज़रूरत नहीं, बल्कि इन जानवरों को यहाँ से जाना होगा जो किसी काम के नहीं। फिर उन्होंने किसी सहाबी से जंगल में यह ऐलान करने को कहा कि इतना वक़्त तुम्हारे पास है, इसके अंदर तुम यहाँ से चले जाओ, अगर नहीं गए तो तुम्हारी ख़ैर नहीं। तारीख़ में लिखा है कि इसके बाद लोगों ने अपनी आँखों से देखा कि एक शेरनी अपने बच्चे को दबाए लिए चली जा रही है और पूरा जंगल ख़ाली हो गया।

ज़ाहिर है सब कुछ अल्लाह का है। सारे जानवर उसके हैं और सारी ताक़तें भी उसी की हैं। आज जो यह ताक़तें हम पर आज़माई जाती हैं, वह इसलिए आज़माई जाती हैं कि हमने अल्लाह की हक़ीक़ी ताक़त का सहारा नहीं लिया। हमने अल्लाह से अपना ताल्लुक़ मज़बूत नहीं किया। आज हमारा हाल यह है कि हम न नमाज़ों की पाबंदी करते हैं, न जमाअत का एहतिमाम, और अगर करते भी हैं तो इंतिहाई बे–दिली से। हदीस में आता है कि एक ज़माना ऐसा आएगा जिसमें बज़ाहिर मस्जिदें आबाद होंगी, लेकिन उनमें अगर ख़ुशू–ओ–ख़ुज़ू रखने वाले तलाश किए जाएँगे तो ऐसे लोग नज़र नहीं आएँगे।

फ़स्ख़ व तफ़रीक़ के मसाएल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

तफ़रीक़ का नौवाँ सबबः

शौहर का किसी ख़तरनाक मर्ज़ का शिकार होनाः

इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक जुनून या किसी ख़तरनाक मर्ज़ जैसे कोढ़, सफ़ेद दाग़ वग़ैरह की वजह से क़ाज़ी निकाह फ़स्ख़ नहीं करेगा, लेकिन इमाम मुहम्मद के नज़दीक अगर इस तरह का कोई ख़तरनाक मर्ज़ शौहर में हो तो क़ाज़ी निकाह फ़स्ख़ कर देगा, आइम्मा–ए–सलासा भी इसी के क़ायल हैं। अमलन दारुल–क़ज़ाओं में इसी पर अमल है। खुद शामी में ज़िक्र है कि अगर क़ाज़ी फ़स्ख़ का क़ायल हो और फ़स्ख़ का फ़ैसला कर दे तो सही माना जाएगा।

(शामीः 3/501, बाबुल–अनीन)

अल्लामा तहतावी ने हर ऐसे ऐब और मर्ज़ को इसमें शामिल किया है जिसके रहते औरत के लिए शौहर के साथ रहना मुमकिन न होः

والحق به القهستانى كل عيب لا يمكنها المقام معه إلا بضرر ونقله المؤلف فى شرح الملتقى

(तहतावी, आख़िर बाबुल–अनीनः 2/213)

इसी लिए अस्र–ए–हाज़िर के उलमा ने एड्स जैसे मर्ज़ का शुमार भी इसी में किया है।

(किताबुन–नवाज़िलः 5/281)

बल्कि मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी साहब ने सोज़ाक और आतिशक (संक्रामक रोग) जैसी बीमारियों को भी इसी में शुमार किया है।

(तलाक़ व तफ़रीक़ः 61)

तफ़रीक़ का दसवाँ सबब

शौहर का तकलीफ़देह मार–पीट करनाः

जब बीवी के अंदर कोई ख़िलाफ़–ए–शरअ चीज़ या गंदी चीज़ पाई जाए या शौहर की नाफ़रमानी उसकी आदत बन जाए और वाज़–ओ–नसीहत करने के बावजूद वह बाज़ न आए तो आख़िरी चारे के तौर पर बतौर तम्बीह हल्की ज़र्ब (चोट) लगाने की शौहरों को शरीअत ने इजाज़त दी है। चुनांचे अल्लाह तआला का इरशाद हैः

وَاللاَّتِيْ تَخَافُونَ نُشُوزَهُنَّ فَعِظُوهُنَّ وَاهْجُرُوهُنَّ فِيْ الْمَضَاجِعِ

(अन–निसाः 34)

"और जिन बीवियों के नुशूज़ (नाफ़रमानी) का तुम्हें डर हो, उन्हें समझाओ और ख़्वाबगाहों में उनसे जुदाई इख़्तियार करो और मारो; फिर अगर वे तुम्हारी बात मान लें तो उन पर राह तलाश न करो।"

आयत–ए–करीमा ने साफ़ कर दिया है कि पहला मरहला समझाने का है, दूसरा ख़्वाबगाह अलग करने का है, फिर भी बाज़ न आएँ तो ज़र्ब की इजाज़त है। लेकिन हदीस शरीफ़ में बताया गया है कि यह ज़र्ब ज़्यादा तकलीफ़देह नहीं होनी चाहिए।

(मुस्लिम, किताबुल–हज, बाब हुज्जतुन–नबी (स0अ0व0)ः 1218)

यानी ऐसी मार न हो जिसके आसार जिस्म पर बाक़ी रह जाएँ।

(अहकामुल–क़ुरआन लिल–जस्सास)

शरीअत ने तकलीफ़देह मार–पीट करने पर पाबंदी लगाई है। लेकिन अगर कोई शौहर तकलीफ़देह मार–पीट करता हो तो अहनाफ़ के नज़दीक औरत मामला क़ाज़ी के पास ले जाएगी और सज़ा की मांग करेगी। लेकिन इमाम मालिक के नज़दीक वह क़ाज़ी से फ़स्ख़–ए–निकाह का मुतालबा भी कर सकती है और दारुल–क़ज़ाओं में अब इसी पर अमल है। मौलाना अब्दुस्समद रहमानी साहब लिखते हैं:

"हालात के पेशे–नज़र अगर मार–पीट हद–ए–ज़रर तक हो और औरत तंग आकर तफ़रीक़ का मुतालबा करे और हनफ़ी क़ाज़ी को फ़रीक़ैन से तहक़ीक़–ए–हाल के बाद गवाहों व सुबूत से ग़ालिब गुमान हो जाए कि औरत अपने दावे में सच्ची है, तो वह इमाम मालिक (रह0) के मस्लक के मुताबिक़ उनके तस्रीहात के अनुसार फ़ैसला दे सकता है।"

(किताबुल–फ़स्ख़ वत्तफ़रीक़: 148)

इमाम मालिक के मस्लक में यह भी है कि जब औरत क़ाज़ी के पास अपना मामला दायर करे तो क़ाज़ी पहले मरहले में शौहर को समझाए कि इस तरह की मार–पीट बंद करे, वरना दोनों के दरमियान जुदाई हो सकती है। अगर इससे फ़ायदा हो जाए तो ठीक है, लेकिन अगर औरत दोबारा क़ाज़ी के पास यही शिकायत लेकर आए और बताए कि शौहर मार–पीट से बाज़ नहीं आया और मामला हल नहीं हुआ, तो क़ाज़ी दो हुक्म मुक़र्रर करेगा जो इस्लाह की कोशिश करेंगे। अगर इस्लाह न हो सके तो अगर ज़्यादती शौहर की तरफ़ से हो तो दोनों हकम शौहर की तरफ़ से ज़ौजा को बिला–मुआवज़ा तलाक़ देंगे, और अगर ज़्यादती बीवी की तरफ़ से हो तो हकमैन (दोनों जज) दो चीज़ों में से कोई एक कर सकते हैं:

(1) शौहर को बीवी के साथ इंसाफ़ और हुस्न–ए–मुआशरत पर आमादा करें।

(2) औरत से मुआवज़ा लेकर दोनों के दरमियान तफ़रीक़ कर दें।

(अल–अहवालुश्शख़्सिय्यह: 362–363)

तफ़रीक़ का ग्यारहवाँ सबब

मियाँ–बीवी में शिक़ाक़ होना:

शिक़ाक़ के इस्तिलाही मानी यह हैं कि दो आदमियों में अदावत आख़िरी शक्ल इख़्तियार कर ले, यहाँ तक कि दोनों में से एक एक शिख़ (किनारे) पर हो और दूसरा दूसरी शिख़ पर। जब मियाँ–बीवी में शौहर की बेजा मार–पीट या ख़ानदानी झगड़ों की वजह से इस तरह का शिक़ाक़ पैदा हो जाए तो कुरआन ने इसके बारे में यह हुक्म दिया है:

وَإِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا۔۔۔الآية

"अगर तुम्हें मियाँ–बीवी के बीच शिक़ाक़ का डर हो तो एक हुक्म मर्द के ख़ानदान से और एक हुक्म औरत के ख़ानदान से मुक़र्रर करो। अगर दोनों हुक्म इस्लाह चाहेंगे तो अल्लाह दोनों के दरमियान मुवाफ़िक़त पैदा कर देगा।" (अन–निसा: 35)

फिर हुक्म के इख़्तियारों के बारे में अइम्मा के दरमियान इख़्तिलाफ़ है। इमाम मालिक और इमाम शाफ़ई के नज़दीक अगर हकमैन के नज़दीक तलाक़ ही मसले का हल हो तो हकमैन तलाक़ दे सकते हैं। लेकिन इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक यह इख़्तियार उन्हें उसी वक़्त होगा जब शौहर उन्हें तलाक़ देने का वकील बना दे।

इस मसले में भी दारुल–क़ज़ाओं में इमाम मालिक के मस्लक पर अमल है। चुनांचे दारुल–क़ज़ा में अगर इस तरह का मामला आए तो क़ाज़ी हकमैन के ज़रिये तलाक़ दिला सकता है। अलबत्ता यह बात पहले गुज़र चुकी है कि जब दूसरे इमाम का मस्लक इख़्तियार किया जाए तो उस इमाम की तमाम शराइत का लिहाज़ करना ज़रूरी होता है। लिहाज़ा इस मसले में भी मालकिया की शराइत मल्हूज़ रखना ज़रूरी होगा।

उनके नज़दीक हुक्मैन में चार बातें शर्त हैं:

(1) मर्द होना।

(2) आदिल होना।

(3) समझ–बूझ रखने वाला होना।

(4) मुताल्लिक़ा मसाइल से वाक़फ़ि होना।

इसी वजह से औरत, बच्चा, मजनून, काफ़िर, फ़ासिक़ और नासमझ को हकम बनाना जायज़ नहीं है। इसी तरह जिसे नुशूज़ और सुलह के अहकाम का इल्म न हो, उसे भी हकम बनाना नाजायज़ है।

अगर मियाँ–बीवी के ख़ानदान में इन शराइत पर उतरने वाले मौजूद हों तो उन्हीं को हकम बनाना वाजिब होगा। इस्तिहबाबी दर्जे में यह है कि हकमैन ज़ौजैन के पड़ोसी हों। यह ज़रूरी नहीं कि हकमैन के फ़ैसले से ज़ौजैन (पति–पत्नी) राज़ी हों। (अल–अहवालुश शख़्सिय्यह: 362–363, किताबुल–फ़स्ख़ वत्तफ़रीक़: 152–157)

मुल्क-ए-हिन्दुस्तान

तानाशाही की राह पर

सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

भारत में दुनिया का सबसे बड़ी लोकतंत्र है। 1950 में लागू होने वाला संविधान, वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनाव, बहुदलीय राजनीति, स्वतंत्र न्यायपालिका और विविध सामाजिक संरचना इस दावे की नींव प्रदान करते हैं। हालांकि हाल के वर्षों में देश के भीतर और वैश्विक स्तर पर यह प्रश्न तीव्र हो गया है कि क्या भारत अपनी लोकतांत्रिक परंपरा को पूरी शक्ति के साथ बनाए हुए है या फिर अधिनायकवाद (तानाशाही) के क्रमिक और परोक्ष रुझान हावी होते जा रहे हैं।

लोकतंत्र का मूल सिद्धांत जन–सार्वभौमिकता है। इसमें सत्ता का स्रोत जनता होती है और राज्य शक्ति संविधान, कानून और विधायी संस्थाओं पर आधारित रहती है। लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अल्पसंख्यकों के अधिकार, शक्तियों का विभाजन, पारदर्शी चुनाव और नेतृत्व की जवाबदेही अनिवार्य तत्व हैं। इसके विपरीत अधिनायकवाद में शक्ति कुछ व्यक्तियों या संस्थाओं तक सीमित हो जाती है, असहमति को दबाया जाता है और कानून का उपयोग शासकों के हित में किया जाता है। आधुनिक दुनिया में अधिनायकवाद प्रायः खुली सैन्य तानाशाही के रूप में नहीं बल्कि "निर्वाचित तानाशाही" (Elected Dictatorship) या "हाइब्रिड प्रणाली" (भ्लइतपक ैलेजमउ) के रूप में सामने आता है, जहाँ चुनाव तो होते हैं लेकिन लगभग अनिवार्य रूप से वही राजनीतिक दल जीतता है जो सत्ता में होता है और लोकतांत्रिक आत्मा धीरे–धीरे कमजोर होती जाती है।

भारतीय संविधान लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष और संघीय मूल्यों का वाहक है। मौलिक अधिकार, संसदीय प्रणाली, स्वतंत्र न्यायपालिका और राज्यों को दिए गए अधिकार लोकतंत्र के संरक्षक हैं। संविधान न केवल राज्य शक्ति को सीमित करता है बल्कि नागरिकों को अभिव्यक्ति, धर्म, सभा और समानता जैसे अधिकार भी प्रदान करता है। लेकिन केवल संविधान का अस्तित्व ही लोकतंत्र की गारंटी नहीं है। असली प्रश्न संविधान के क्रियान्वयन और उसकी आत्मा के सम्मान का है। जब संवैधानिक संस्थाएँ सरकार के हित के अनुसार काम करने लगें, कमजोर कर दी जाएँ या कानूनों का प्रयोग सत्तारूढ़ दल की इच्छा के अनुसार होने लगे, तब लोकतंत्र केवल औपचारिक ढाँचे तक सीमित रह जाता है।

संसद लोकतंत्र का केंद्र होती है जहाँ जनप्रतिनिधि कानून निर्माण और सरकार की जवाबदेही सुनिश्चित करते हैं। भारत में संसद सक्रिय है, लेकिन हाल के वर्षों में यह धारणा मजबूत हुई है कि महत्वपूर्ण कानून जल्दबाजी में, सीमित बहस के साथ और कई बार संसदीय समितियों की प्रभावी समीक्षा के बिना पारित किए जा रहे हैं। विपक्ष की भूमिका को सीमित करना, बहस के लिए समय कम करना और बहुमत के बल पर निर्णय थोपना लोकतांत्रिक परंपरा को कमजोर करता है। यदि संसद केवल सरकारी फैसलों की पुष्टि तक सीमित रह जाए तो अधिनायकवादी व्यवस्था मजबूत होती जाती है।

भारत में नियमित रूप से चुनावों का आयोजन लोकतंत्र की एक बड़ी पहचान है। चुनाव आयोग को लंबे समय तक एक मजबूत संस्था माना जाता रहा है और बड़ी संख्या में मतदाताओं की भागीदारी जनचेतना को दर्शाती है। लेकिन चुनावी अभियानों में धन और शक्ति की बढ़ती भूमिका, चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति में पक्षपात के आरोप, चुनाव आयोग की मदद से फर्जी मतदाताओं को जोड़ने, मीडिया के असंतुलित उपयोग, घृणास्पद भाषणों और सरकारी संसाधनों के कथित दुरुपयोग ने चुनावी पारदर्शिता पर प्रश्नचिन्ह खड़े कर दिए हैं। इसके अलावा राजनीतिक दलों के भीतर लोकतंत्र की कमी, नेतृत्व का केंद्रीकरण और वैचारिक राजनीति के बजाय व्यक्तिवादी राजनीति का बढ़ावा भी लोकतांत्रिक कमजोरियों की ओर संकेत करता है।

स्वतंत्र मीडिया लोकतंत्र की आँख, कान और आवाज़ होता है। भारत में मीडिया का दायरा व्यापक है, लेकिन वर्तमान समय में पत्रकारिता के क्षेत्र पर सत्ताधारी तत्वों के प्रभाव, आत्म–सेंसरशिप, सरकारी नैरेटिव की प्रधानता और असहमति की आवाज़ों के खिलाफ कानूनी कार्रवाइयों के आरोप सामने आए हैं। पत्रकारों, बुद्धिजीवियों और सामाजिक कार्यकर्ताओं पर मुकदमे, गिरफ्तारियाँ और उत्पीड़न अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को प्रभावित करते हैं। सोशल मीडिया ने जनता को मंच दिया है, लेकिन इसके साथ निगरानी, आईटी सेल के माध्यम से विरोधी आवाज़ों को दबाना, गलत सूचना और घृणा फैलाने की घटनाएँ भी बढ़ी हैं। इन पर अंकुश लगाना आवश्यक है ताकि स्वतंत्रता, पारदर्शिता और न्याय को बढ़ावा मिल सके।

न्यायपालिका को लोकतंत्र का संरक्षक माना जाता है। भारतीय न्यायपालिका ने अपने गौरवशाली अतीत में कई अवसरों पर संवैधानिक अधिकारों की रक्षा की है। लेकिन कुछ फासीवादी शक्तियों के प्रभाव में न्याय में देरी और संवेदनशील मामलों में न्यायिक चुप्पी या विलंब ने जनविश्वास को चोट पहुँचाई है। देश में कुछ फासीवादी तत्व कानून से ऊपर नजर आते हैं और असामान्य रूप से न्यायाधीशों को मामलों से हटाना, उनका तबादला करना यहां तक कि गंभीर मामलों में उनकी हत्या तक की घटनाएँ सामने आई हैं। इससे कमजोर वर्गों को समय पर न्याय नहीं मिल पाता और कानून का शासन कमजोर पड़ता है, जो अधिनायकवादी प्रवृत्तियों को बढ़ावा देता है।

भारत एक संघीय राज्य है जहाँ केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन लोकतांत्रिक संतुलन के लिए आवश्यक है। हाल के वर्षों में केंद्र की शक्तियों में वृद्धि और राज्यों के अधिकारों में कमी को लेकर चिंताएँ व्यक्त की गई हैं। राज्यपालों की भूमिका, वित्तीय संसाधनों का वितरण और केंद्रीय नीतियों के क्रियान्वयन में राज्यों की राय की अनदेखी संघीय भावना को आहत करती है। हर चुनाव से पहले "वन नेशन, वन इलेक्शन" का प्रस्ताव सामने आता है। कहने को यह चुनावी खर्च कम करने की पहल है और इसका विधेयक पिछले वर्ष दिसंबर में पारित भी हुआ है, लेकिन इस व्यवस्था में लोकतंत्र का वही हश्र होने की आशंका है जो चंडीगढ़ में मेयर चुनाव के दौरान हुआ, जिस पर बाद में सुप्रीम कोर्ट को यह कहना पड़ा कि "यह लोकतंत्र की हत्या और उसका मज़ाक है।" इन सरकारी कदमों के कारण यह कहा जा सकता है कि संघीयता के कमजोर होने से लोकतंत्र भी कमजोर और अधिनायकवाद मजबूत होता जा रहा है।

लोकतंत्र की पहचान यह है कि बहुमत का शासन अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के साथ हो। भारत की सामाजिक संरचना बहुधार्मिक, बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक है। हाल के वर्षों में देखा गया है कि अल्पसंख्यकों के खिलाफ कुछ फासीवादी शक्तियाँ सक्रिय हैं और सरकार में भी उनका प्रभाव बढ़ता जा रहा है। अल्पसंख्यकों के घरों को तोड़ना और यहाँ तक कि उनके अस्तित्व को खतरे में डालना उनका मुख्य एजेंडा प्रतीत होता है। धार्मिक, भाषाई और सामाजिक अल्पसंख्यकों में असुरक्षा की भावना, भेदभाव और घृणास्पद बयान लोकतंत्र की नींव को कमजोर करते हैं और अधिनायकवाद को मजबूत करते हैं।

लोकतंत्र केवल राजनीतिक अधिकारों तक सीमित नहीं है, बल्कि आर्थिक न्याय से भी जुड़ा है। गरीबी, बेरोजगारी, महँगाई और असमानता जैसे मुद्दे जनविश्वास को प्रभावित करते हैं। वर्तमान में भारतीय सरकार की नीतियाँ कुछ चुनिंदा बड़े उद्योगपतियों को लाभ पहुँचाती प्रतीत होती हैं, जबकि आम जनता के लिए केवल राशन जैसी राहतें हैं और शेष के लिए बहुत कम। बड़े उद्योगपतियों को बैंक ऋण में छूट मिलती है, जबकि आम लोगों के लिए उसी बैंक के कर्ज पर चक्रवृद्धि ब्याज और कोई राहत नहीं, जिसके कारण कई लोग आत्महत्या जैसे कदम उठाने को मजबूर होते हैं। एक ओर बड़े उद्योगपतियों पर कृपा–दृष्टि है, दूसरी ओर आम जनता को न तो व्यवसाय में सहायता मिलती है और न ही पर्याप्त नौकरियाँ, सिवाय आश्वासन और टालमटोल के। ऐसा प्रतीत होता है कि इन उद्योगपतियों और फासीवादी शक्तियों के बीच कोई गठजोड़ है और देश को बेचने जैसी मुहिम चल रही है। जब आर्थिक नीतियाँ कुछ वर्गों को लाभ पहुँचाएँ और बहुसंख्यक जनता को नजरअंदाज करें, तो लोकतंत्र कमजोर और अधिनायकवादी शासन की राह प्रशस्त होती है।

उपरोक्त तथ्यों के आलोक में कहा जा सकता है कि भारत इस समय ऐसे दौर से गुजर रहा है जहाँ लोकतांत्रिक ढाँचे तो मौजूद हैं, लेकिन उनकी आत्मा गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। यह स्थिति "हाइब्रिड प्रणाली" से मिलती–जुलती है, जिसमें संविधान और चुनाव तो होते हैं, लेकिन सत्ता का केंद्रीकरण, संस्थागत दबाव और नागरिक स्वतंत्रताओं में कटौती अधिनायकवाद की दिशा में ले जाती है।

वर्तमान भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह कहना उचित होगा कि देश में न तो खुली तानाशाही है और न ही पूर्ण और सशक्त लोकतंत्र। भारत एक ऐसी लोकतांत्रिक व्यवस्था है जो दबाव, कमजोरियों और अंतर्विरोधों से ग्रस्त है। यदि संविधान की सर्वोच्चता, संस्थाओं की स्वायत्तता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अल्पसंख्यकों के अधिकार और संघीय संतुलन को प्रभावी ढंग से सुरक्षित नहीं किया गया, तो लोकतंत्र केवल एक संवैधानिक शब्द बनकर रह जाने का खतरा है। वास्तविक लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि सत्ता जनता के हित और कानून के अधीन रहे, न कि शक्ति और बहुमत के बल पर।

मज़हब इस्लाम की इम्तियाज़ी ख़ुसूसियत

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

इस्लामोफ़ोबिया (Islamophobia) (इस्लाम का डर) यह लफ़्ज़ मग़्रिब (पश्चिम) ने इस्लाम को बदनाम करने के लिए इस्तेमाल किया। यह लफ़्ज़ 11 सितम्बर 2001 वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हमले के बाद ज़्यादा शिद्दत के साथ इस्तेमाल किया गया। ऐसा लगता था कि यूरोप के सामने असल निशाना सिर्फ़ अब इस्लाम बचा है और हक़ीक़तन ऐसा है भी।

ब्रिट्रिश पत्रकार रूनमीड ट्रस्ट का कहना है:

"इस्लाम एक ऐसा दीन है जो सख़्ती और दुश्मनी की सिफ़ात से मुत्तसिफ़ (युक्त) है, जो ख़तरे में डालने वाला है, इस्लाम शिद्दत–पसंदी (कट्टरपंथ) की बातें करता है।"

इसहाक़ बोमान ने एक जगह लिखा है:

"पश्चिमी देशों का इस्लाम से ख़ौफ़ज़दा होना स्वाभाविक है, इसके कई अस्बाब (कारण) हैं, उनमें एक सबब यह है कि मुत्तबेईन–ए–इस्लाम (इस्लाम के अनुयायी) की तादाद इब्तिदा–ए–अहद से लेकर अब तक कभी घटी नहीं बल्कि बराबर बढ़ रही है। इस्लाम महज़ चंद रस्मी इबादात का नाम नहीं, जो शख़्स इस्लाम ले आता है वह इससे फिरने का नाम ही नहीं लेता, तारीख़ में कोई ऐसा वाक़्या नहीं मिलता कि कोई जमाअत इस्लाम लाने के बाद नसरानी (ईसाई) हो गई हो।"

इस्लाम किसी नस्ल या मुल्क का मज़हब नहीं बल्कि वह आफ़ाक़ी और आलमगीर (Universal) है:

وَمَا أَرْسَلْنَاكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَالَمِيْنَ

"हमने आपको तमाम जहानों के लिए रहमत बना कर भेजा है।" (सूरह अम्बियाः 107)

قُلْ يَا أَيُّهَا النَّاسُ إِنِّىْ رَسُولُ اللّٰهِ إِلَيْكُمْ جَمِيْعاً

"आप कह दीजिए कि ऐ तमाम इंसानो! मैं तुम सब की तरफ़ अल्लाह का भेजा हुआ रसूल हूँ।" (सूरह आराफ़: 157)

इस्लामी निज़ाम की बुनियाद उस अलीम–ओ–ख़बीर की हिदायात पर उस्तवार (स्थापित) की गई है जो बनी–नौ–ए–इंसां (मानव जाति) का ख़ालिक़ (स्रष्टा) भी है और उसकी नफ़्सियात (मनोविज्ञान), ज़रूरतों और तक़ाज़ों से पूरी तरह आगाह भी है:

أَلَا يَعْلَمُ مَنْ خَلَقَ وَهُوَ اللَّطِيْفُ الْخَبِيْرُ

"क्या वही नहीं जानेगा जिसने पैदा किया है, वह तो बड़ा बारीकबीन और बाख़बर है।" (सूरह मुल्क: 14)

इस्लाम ही तन्हा वह मज़हब है जिसने कमाल का बजा तौर पर दावा किया है और इसके दावे पर किसी को उंगली उठाने की जुर्रत नहीं हुई:

اَلْيَوْمَ أَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَأَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِىْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الإِسْلَامَ دِيْناً

"आज मैंने दीन मुकम्मल कर दिया और अपनी नेमत आप पर तमाम कर दी और ब–हैसियत दीन के इस्लाम को मुंतख़ब (चुन) कर लिया।" (सूरह माइदा: 3)

इस्लाम ने तअस्सुब (भेदभाव/पूर्वाग्रह) की बेख़–कनी (उन्मूलन) की हमह–जेहत (बहुआयामी) तालीम यह कह कर दी:

يَا أَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذِىْ خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ وَاحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالاً كَثِيْراً وَنِسَاءً

"ऐ इंसानो! अपने उस रब से डरो जिसने तुम को एक जान से पैदा किया और उससे उसका जोड़ा बनाया और इन दोनों से बहुत से मर्दों और औरतों को फैला दिया।" (सूरह निसा: 01)

يَا أَيُّهَا النَّاسُ إِنَّا خَلَقْنَاكُم مِّن ذَكَرٍ وَأُنثَىٰ وَجَعَلْنَاكُمْ شُعُوباً وَقَبَائِلَ لِتَعَارَفُوا إِنَّ أَكْرَمَكُمْ عِندَ اللّٰهِ أَتْقَاكُمْ

"ऐ इंसानो! हमने तुम को एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम को ख़ानदानों और क़बाइलों में तक़्सीम (विभाजित) कर दिया ताकि तुम एक दूसरे को पहचान सको, अल्लाह के नज़दीक तुम में सबसे मुअज्ज़ज़ (सम्मानित) वह है जो तुम में सबसे ज़्यादा

डरता हो।" (सूरह हुजूरातः 13)

मुसावात (समानता) का दर्स यह कह कर दियाः

الخلق عيال الله

"मख़्लूक़ अल्लाह का कुनबा है।"

इस निज़ाम के दाईयों (प्रचारकों) और अल्लाह के नुमाइंदों ने हमेशा यह सदा लगाईः

وَأَنَاْ لَكُمْ نَاصِحٌ أَمِيْن

"और मैं तुम्हारा ख़ैर–ख़्वाह अमानतदार हूँ।" (सूरह आराफ़ः 67)

और बे–लोसी (निस्वार्थ भाव) का पैग़ाम यह कह कर दियाः

إِنْ أَجْرِىَ إِلَّا عَلَى اللَّهِ وَبُوَ عَلَى كُلِّ شَىْء ٍشَهِيْدٌ

"मेरा अज्र सिर्फ़ अल्लाह पर है और वह हर चीज़ पर गवाह है।" (सूरह सबाः 47)

मौजूदा मज़ाहिब में इस्लाम तन्हा वह मज़हब है जिसने सदियों बंदगान–ए–खुदा की इबादात से लेकर मामलात तक, बैनुल–अक़्वामी (अंतरराष्ट्रीय) मसलों से लेकर ख़ानगी (घरेलू) पेचीदगियों तक का कामयाब हल पेश किया।

मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0) अपनी माया–नाज़ किताब "तहज़ीब–ओ–तमद्दुन पर इस्लाम के असरात–ओ–एहसानात" में लिखते हैंः

"अगर अक़वाम–ओ–मिलल (राष्ट्रों और समुदायों) की ज़िंदगी और तमद्दुन में नुमायाँ इस्लामी असरात की तईय्युन–ओ–तहदीद (निर्धारण) नागुज़ीर (अनिवार्य) है तो हम इख़्तिसार–ओ–इंतिख़ाब (संक्षेप और चयन) के तौर पर इन्हीं दस बुनियादी और क़ीमती अताया (उपहार) मुतईय्यन करने की कोशिश करेंगे जिसका नौ–ए–इंसानी की रहनुमाई, सलाह–ओ–फ़लाह, तामीर–ओ–तरक़्क़ी में नुमायाँ किरदार रहा है, वह इस्लामी अतियात (Gift) ये हैंः

1– साफ़ और वाज़ेह अक़ीदा–ए–तौहीद।

2– इंसानी वहदत–ओ–मुसावात (मानवीय एकता और समानता) का तसव्वुर।

3– इंसानियत के शर्फ़ और इंसान की इज़्ज़त–ओ–बुलंदी का एलान।

4– औरत की हैसियत–ए–उर्फ़ी की बहाली और उसके हुक़ूक़ की बाज़याबी।

5– ना–उम्मीदी, बद–फ़ाली की तरदीद (खंडन) और नफ़्सियात–ए–इंसानी में हौसला–मंदी, एतमाद–ओ–इफ़्तिख़ार की आफ़रीनश (सृजन)।

6– दीन–ओ–दुनिया का इज्तिमा (मिलन) और हरीफ़–ओ–बरसर–ए–जंग इंसानी तबक़ात की वहदत।

7– दीन–ओ–इल्म के दरमियान मुक़द्दस दाइमी (स्थायी) रिश्ते का क़याम–ओ–इस्तिहकाम और एक की क़िस्मत को दूसरे की क़स्मित से वाबस्ता कर देना, इल्म की तक़रीम–ओ–ताज़ीम और उसे बा–मक़सद, मुफ़ीद और ख़ुदा–रसी का ज़रिया बनाने की सई–ए–महमूद (सराहनीय प्रयास)।

8– अक़्ल से दीनी मुआमलात में भी काम लेने और फ़ायदा उठाने और अनफ़ुस–ओ–आफ़ाक़ (स्वयं और ब्रह्मांड) में ग़ौर–ओ–फ़िक्र की तरग़ीब।

9– उम्मत–ए–इस्लामिया को दुनिया की निगरानी और रहनुमाई, इन्फ़िरादी–ओ–इज्तिमाई (व्यक्तिगत और सामूहिक) अख़्लाक़–ओ–रुजहानात के एहतिसाब (जवाबदेही), दुनिया में इंसाफ़ के क़याम और शहादत–ए–हक़ की ज़िम्मेदारी क़बूल करने पर आमादा करना।

10– आलमगीर एतक़ादी और तहज़ीबी वहदत का क़ियाम।"

(तहज़ीब–ओ–तमद्दुन पर इस्लाम के असरात–ओ–एहसानात, सफ़ारू 20–21)

मज़कूरा बाला सुतूर (उपरोक्त पंक्तियों) की रोशनी में यह बात वाज़ेह हो जाती है कि इस्लाम का निज़ाम–ए–हयात बनने का दावा हक़ीक़त की कसौटी पर खरा उतरता है और इस वक़्त दुनिया में तन्हा वही एक मज़हब है जो मुतबादिल (वैकल्पिक) निज़ाम–ए–हयात के तौर पर पेश किया जा रहा है। ज़ेल (नीचे) में पेश किये गए दलाइल के बाद इसमें शक की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती कि इस्लाम ही मुतबादिल निज़ाम–ए–हयात है इसलिए कि इस्लाम दीन–ए–तौहीद हैः

وَاعْبُدُواْ اللّهَ وَلاَ تُشْرِكُواْ بِهِ شَيْئاً

"और अल्लाह की इबादत करो और उसके साथ किसी को शरीक न करो।" (सूरह निसाः 36)

इस्लाम रूहानियत का मज़हब है:

الاحسان أن تعبد الله كأنك تراه فالم تكن تراه فانه يراك

"एहसान यह है कि तुम अल्लाह की इबादत इस तरह करो गोया कि तुम उसको देख रहे हो और अगर तुम उसको नहीं देख रहे हो तो वह तुमको देख रहा है।" (सही बुख़ारी)

इस्लाम अख़्लाक़–ए–हसना (उत्तम चरित्र) का मुअल्लिम (शिक्षक) है:

إِنَّ اللّهَ يَأْمُرُ بِالْعَدْلِ وَالإِحْسَانِ وَإِيتَاء ذِيْ الْقُرْبَى وَيَنْهَى عَنِ الْفَحْشَاء وَالْمُنكَرِ وَالْبَغْيِ

"अल्लाह तआला तुमको हुक्म करता है इंसाफ़ का और एहसान करने का और रिश्तेदारों को देने का और वह बेहयाई और ज़ुल्म–ओ–ज़्यादती से मना करता है।" (सूरह नहल: 90)

بعثت لأتمم مكارم الأخلاق

"मैं अख़्लाक़–ए–करीमाना की तकमील (पूर्णता) के लिए भेजा गया हूँ।"

इस्लाम अमली दीन है:

وَأَن لَّيْسَ لِلْإِنسَانِ إِلَّا مَا سَعَى * وَأَنَّ سَعْيَهُ سَوْفَ يُرَى

"और इंसान के लिए वही है जिसकी उसने मेहनत की और अनक़रीब उसकी कोशिश उसको दिखाई जाएगी।" (सूरह नजम: 39–40)

فَلَا كُفْرَانَ لِسَعْيِهِ

"और उसकी मेहनत राएगा (व्यर्थ) नहीं जाएगी।" (सूरह अम्बिया: 93)

इस्लाम बानी–ए–उखुव्वत (भाईचारे का संस्थापक) है:

إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ إِخْوَةٌ فَأَصْلِحُوا بَيْنَ أَخَوَيْكُمْ

"तमाम ईमान वाले भाई–भाई हैं अपने भाइयों में सुलह कराओ।"

इस्लाम इंसान की इंसानियत को बुलंद करता है:

وَلَقَدْ كَرَّمْنَا بَنِيْ آدَمَ وَحَمَلْنَاهُمْ فِيْ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ

"बेशक हमने आदम के बेटों को बड़ी इज़्ज़त दी और खुश्की और दरिया में उनको सवारी दी।" (सूरह अल–इस्रा: 70)

इस्लाम नेकी की हिमायत को पसंद करता है और बदी की हिमायत को नापसंद:

وَتَعَاوَنُواْ عَلَى الْبرِّ وَالتَّقْوَى وَلاَ تَعَاوَنُواْ عَلَى الإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ

"नेकी और तकवा (परहेजगारी) पर आपस में तआवुन (सहयोग) करो और गुनाह और सरकशी में तआउन मत करो।" (सूरह माइदा: 02)

इस्लाम मोहब्बत–ओ–करम गुस्तरी का दीन है:

ارحموا من في الأرض يرحمكم من في السماء

"ज़मीन वालों पर रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा।"

इस्लाम हुकूमत में रिआया (प्रजा) को हिस्सा–दार बनाता है:

وَشَاوِرْهُمْ فِيْ الأَمْرِ

"और आपस के मुआमले में मशवरा करो।" (सूरह आले इमरान: 159)

وَأَمْرُهُمْ شُورَى بَيْنَهُمْ

"और वह आपस में मशवरा करते हैं।"

इस्लाम दीन–ए–तमद्दुन है:

وَرَهْبَانِيَّةً ابْتَدَعُوهَا مَا كَتَبْنَاهَا عَلَيْهِمْ إِلَّا ابْتِغَاءَ رِضْوَانِ اللَّهِ فَمَا رَعَوْهَا حَقَّ رِعَايَتِهَا

"और यह जो रहबानियत की बिदअत उन्होंने जारी की है, हमने उन्हें इसका हुक्म नहीं दिया था मगर उन्होंने अल्लाह को राज़ी करने के लिए दरवेशी और फ़क़ीरी की ज़िंदगी अपने दिल से इख़्तियार की मगर उसकी निगेहबानी और रियायत न कर सके।"

قُلْ مَنْ حَرَّمَ زِيْنَةَ اللّهِ الَّتِيَ أَخْرَجَ لِعِبَادِهِ وَالْطَّيِّبَاتِ مِنَ الرِّزْقِ

"आप कह दीजिए अल्लाह की बनाई हुई ज़ीनत को और खाने की पाकीज़ा चीज़ों को किसने हराम किया जो अल्लाह ने अपने बंदों के लिए पैदा कीं।" (सूरह आराफ़: 32)

इस्लाम की इन बुनियादी तालीमात को अगर मुसलमान सही तौर से दुनिया के सामने पेश करते, पूरे एतमाद के साथ और यक़ीन की उस कैफ़ियत के साथ जो क़ूरून–ए–अव्वल (प्रारंभिक युग) में हुज़ूर अकरम (स0अ0व0) की सोहबत–याफ़्ता जमाअत (सहाबा) ने पेश किया, तो बजा तौर पर तारीख़–ए–इंसानी आज भी वही मुहैय्युर–उल–उक़ूल (विस्मयकारी) वाक़्यात देखेगी, लेकिन इसके लिए सबसे अहम बात यह है कि वह यक़ीन और इस्लाम से सही तौर पर वाबस्तगी (जुड़ाव) खुद हमारे अंदर हो, आज हम खुद हालात के रौ (बहाव) में बहकते जा रहे हैं, सेक्युलरिज़्म के नाम पर या किसी और इज़्म (वाद) के नाम पर, अस्लन (मूलत:) होना यह चाहिए कि इस्लामी ज़िंदगी को दुनिया के सामने हम पेश करें।

इल्हाद का तूफ़ान – सबब और हल

मोहम्मद नज्मुद्दीन नदवी

दुनिया के हर मज़हब में तसव्वुर–ए–इलाह पाया जाता है। इसका यक़ीन व इक़रार फ़िक्री व मज़हबी तौर पर एक बुनियादी असास है। दौर–ए–जदीद का एक बड़ा अलमिया यह है कि मज़हब पर फ़िक्री हमला और मज़हबी अहकाम से अमली इन्हिराफ़ उरूज पर है। इस वक़्त के मुख़्तलिफ़–उन–नौ (विभिन्न प्रकार के) फ़ित्नों में एक ख़तरनाक और तेज़ी से बढ़ने वाला फ़ित्ना इल्हाद व दहरियत (नास्तिकता) है। दरअसल इस फ़ित्ने का दरवाज़ा कम–फ़हम मुद्दइयान–ए–इल्म व अक़्ल ने अपने आप को अक़्ल–ए–कुल मान कर खोला है। इसके नतीजे में हर–कस–ओ–नाकस ने अपनी अक़्ल व फ़हम के दायरे में ही रह कर ख़ालिक़ व बारी तआला के बारे में सोचना समझना शुरू कर दिया और ला–इल्मियत, हठधर्मी, नफ़्सानी ख़्वाहिश में रुकावट या ज़हनी बीमारी के सबब वजूद–ए–बारी तआला का इन्कार कर बैठे। फिर यहीं से फ़िक्री ख़तरात और इल्हाद की आँधी आगे बढ़नी शुरू हुई और इसने इंसानी समाज को अपनी लपेट में लेकर वजूद–ए–बारी तआला पर एतिमाद व ईमान में रख़ना पैदा करना चाहा।

यह मुस्लिम हक़ीक़त है कि अगर ईमान व एतिक़ाद सही हो, यक़ीन मज़बूत हो और दीन का इल्म हासिल हो तो हवा जिस क़दर भी तुंद व तेज़ हो, एक साहिब–ए–ईमान का चिराग़ जलेगा और "वह शम्मा क्या बुझे जिसे रौशन ख़ुदा करे" का मिस्दाक़ बन कर रहेगा। हदीस–ए–पाक में है:

لاَ تَضُرُّکَ الْفِتْنَةُ مَا عَرَفْتَ دِیْنَکَ، إِنَّمَا الْفِتْنَةُ إِذَا اشْتَبَهَ عَلَیْکَ الْحَقُّ وَالْبَاطِلُ

"जब तक तुम्हें दीन–ओ–मज़हब की आगही व मारिफ़त हासिल है, फ़ितना तुम्हें किसी तरह भी नुक़सान नहीं पहुँचाएगा; फ़ितना उस जगह नुक़सान पहुँचाता है जहाँ तुम्हारे ऊपर हक़ व बातिल और ख़ैर व शर मुश्तबा हो जाए।" (इब्ने अबी शैबा: 38447)

अक़्वाम–ए–आलम की मज़हबी तारीख़ में यह तसव्वुर मौजूद है और इस्लाम तो साफ़ लफ़्ज़ों में कहता है कि इंसानी मुआशरे का आग़ाज़ तौहीद–ए–इलाही के तसव्वुर और अक़ीदे से हुआ है, लेकिन मरूर–ए–ज़माना के साथ इंसानी मुआशरे में शिर्क–ओ–इल्हाद एक नुक़्ता–ए–नज़र की शक्ल में मुतबादिल तौर पर फ़िक्री तारीख़ में मौजूद रहा है। अंबियाई तालीमात पर यक़ीन के हामिलीन मज़ाहिब में भी इल्हाद ने जगह पाई जैसे नसरानियत व यहूदियत में अस्मा–ए–इलाही में ईमान के हवाले से इल्हाद पाया जाता है, जिन्होंने सैय्यदना ईसा (अलैहिस्सलाम) को अल्लाह कहा या तीन इलाह में एक इलाह कहा, इसी तरह इब्नुल्लाह कहा, या जिन लोगों ने हुलूलियत का अक़ीदा गढ़ा। नसारा के इन तमाम अक़ाइद की बहुत सी आयात–ए–क़ुरआनी में तरदीद है और शुब्हात व एतराज़ात के तशफ़्फ़ी–बख़्श जवाब भी हैं। एक मग़्रिबी माहिर–ए–इलाहियात (पसीमसउ बीउपकज) ने अपनी किताब "जीम व्तपहपद व जीम प्कमं व ळवक" में अपनी इल्मी ज़िंदगी की ज़ायद अज़ चेहल साला (40 साल से ज़्यादा) तवील तहक़ीक़ पेश कर दी है। इसमें उन्होंने यह बताया है कि "मैं तहक़ीक़ के नतीजे में यहाँ पर पहुँचा कि इंसान के इब्तिदाई मुआशरे में उसका मज़हब तौहीद था। इब्तिदाई दौर का इंसान एक तख़लीक़कार पर ईमान व एतिक़ाद रखता था जो रहम व करम और एहसान की सिफ़तों से ज़ी–सिफ़त ख़ालिक़ था। इस इब्तिदाई इंसानी मुआशरे का इंसान एक माबूद को इस कायनात का तख़लीक़कार और ज़मीन व आसमानों का मुतलक़ हाकिम जानता था, इसके बाद आने वाले इंसानों ने एक से ज़्यादा माबूद बनाकर इबादत शुरू की।"

यह एक ग़ैर–मामूली इज़्हार है, इसमें हक़ की सदा–ए–बाज़गश्त है। क़ुरआन–ए–हकीम में इंसान के इस इब्तिदाई तौहीदी मुआशरे का ज़िक्र है:

كَانَ النَّاسُ أُمَّةً وَاحِدَةً فَبَعَثَ اللّٰهُ النَّبِيِّيْنَ مُبَشِّرِيْنَ وَمُنذِرِيْنَ وَأَنزَلَ مَعَهُمُ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ لِيَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ فِيْمَا اخْتَلَفُواْ فِيْهِ

"सब लोग इब्तिदा में एक दीन पर थे फिर उनमें आपस में इख़्तिलाफ़ हुआ तो अल्लाह ने नबियों को भेजा जो ख़ुशख़बरी देते हैं और डराते हैं और अल्लाह ने इन

नबियों के साथ सच्ची किताब भी नाज़िल की ताकि अल्लाह उन लोगों के माबैन इन बातों का फ़ैसला कर दे जिनमें वो इख़्तिलाफ़ कर रहे हैं, मगर इसमें इख़्तिलाफ़ सिर्फ़ उन लोगों ने ही किया जिन्हें वो किताब मिल चुकी थी और रौशन हिदायात पा लेने के बाद भी आपस में ज़्यादती करना चाहते थे। फिर अल्लाह तआला ने ईमान वालों को अपने हुक्म से हक़ दिखाया जिसमें लोगों ने इख़्तिलाफ़ किया था, अल्लाह जिसे चाहे राह–ए–रास्त दिखा देता है।" (सूरह बक़रा: 213)

एक मुलहिद व मुनकिर–ए–खुदा अव्वलीन मरहले में वजूद–ए–बारी तआला का इंकार करता है। इंकार–ए–खुदा का गिरोह जो दौर–ए–जदीद में सामने आया, इसमें अक्सर के ताने–बाने इश्तिराकी फ़लसफ़े से हैं। सच्ची बात यह है कि कुलूब–ए–इंसानी फ़ितरतन बारी तआला के वजूद का इक़रार करते हैं और मुनकिरीन का दिल इसके वजूद का यक़ीन व एतिमाद रखता है। कुरआन की शहादत है:

وَجَحَدُوا بِهَا وَاسْتَيْقَنَتْهَا أَنفُسُهُمْ ظُلْماً وَعُلُوّاً

"उन्होंने ज़ुल्म और ग़ुरूर की वजह से उनसे इंकार कर दिया, हालाँकि उनके दिल उनके क़ायल हो चुके थे।" (सूरह नमल: 14)

बड़ा अलमिया है कि मुलहिदीन वजूद–ए–बारी तआला का इंकार करते हैं और अपनी नफ़्सानी ख़्वाहिश को माबूद मानते हैं। उन्हीं ख़्वाहिशों की बुनियाद पर इंकार–ए–खुदा करते हैं। कुरआन ने ऐसों की निस्बत साफ़ कहा है:

أَفَرَأَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ إِلَٰهَهُ هَوَاهُ وَأَضَلَّهُ اللَّهُ عَلَىٰ عِلْمٍ وَخَتَمَ عَلَىٰ سَمْعِهِ وَقَلْبِهِ وَجَعَلَ عَلَىٰ بَصَرِهِ غِشَاوَةً فَمَن يَهْدِيهِ مِن بَعْدِ اللَّهِ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ * وَقَالُوا مَا هِيَ إِلَّا حَيَاتُنَا الدُّنْيَا نَمُوتُ وَنَحْيَا وَمَا يُهْلِكُنَا إِلَّا الدَّهْرُ وَمَا لَهُم بِذَٰلِكَ مِنْ عِلْمٍ إِنْ هُمْ إِلَّا يَظُنُّونَ

"क्या आपने उस शख़्स को देखा जिसने अपनी ख़्वाहिश–ए–नफ़्स को माबूद बना रखा है और अल्लाह ने उसको इल्म के बावजूद गुमराह कर दिया और उसके कान और उसके दिल पर मोहर लगा दी और उसकी आँख पर पर्दा डाल दिया, फिर उसे अल्लाह के बाद कौन हिदायत दे सकता है? क्या तुम फिर भी नसीहत हासिल नहीं करते? और उन्होंने कहा कि यह सिर्फ़ हमारी दुनियावी ज़िंदगी है, हम मरते और जीते हैं, हमें सिर्फ़ ज़माना हलाक करता है। (हक़ीक़त तो यह है कि) उन्हें इस बारे में कोई इल्म व आगही नहीं, वो सिर्फ़ ख़याली बातें करते हैं।" (सूरह जासिया: 23–24)

इल्हाद के नज़रिया व फ़लसफ़े को सबसे ज़्यादा डार्विन के नज़रिया–ए–इर्तिका (जीमवतल वि म्अवसनजपवद) से ताक़त पहुँची क्योंकि उसके नज़रिये में इल्हाद के नज़रियाती व फ़लसफ़ियाना पहलू थे जिसने मज़ाहिब व अदियान के बुनियादी अक़ाइद (वजूद–ए–बारी तआला, अक़ीदा–ए–रिसालत और तसव्वुर–ए–आख़िरत) पर हमला किया था। मुल्हिदीन व मुनकिरीन–ए–खुदा का नज़रिया व तसव्वुर है कि एक माफ़ौक़–उल–फ़ितरत ख़ुदा का तसव्वुर या मौजूद जानना मुमकिन नहीं। मुल्हिदीन का तबक़ा कायनात के निज़ाम में किसी अज़ीम हस्ती के दस्त–ए–कुदरत की कारफ़रमाई को नज़रअंदाज़ करता है और इर्तिकाई निज़ाम को कायनात के नज़्म की बुनियाद मानता है। ख़ुदा और मज़हब का इंकार इसलिए भी है कि मज़हब बज़ाहिर साइंस का मुख़ालिफ़ नज़र आता है और नफ़्स–परस्ती की हौसला–शिकनी करता है, यह इस्तदलाल भी असल में ग़ैर–इल्मी व ग़ैर–मंतक़ी तरीक़ा–ए–इस्तदलाल है।

एक अमेरिकी साइंसदाँ (वैज्ञानिक) म्कूंतक स्नजीमत झमेमस ने लिखा है: "ग़ैर–इरादी तौर पर साइंसी तहक़ीक़ात ने साबित कर दिया है कि कायनात अपना एक आग़ाज़ रखती है और ऐसा करते हुए उसने ख़ुदा की सदाक़त को साबित कर दिया है क्योंकि जो चीज़ अपना आग़ाज़ रखती है वो अपने आप शुरू नहीं हो सकती, यक़ीनन वो एक मुहर्रिक–ए–अव्वल, एक ख़ालिक़, एक ख़ुदा की मोहताज है।" (जीम म्अपकमदबम व ळिवकए च्रू51)

ळमवतहम म्तस क्ंअपे एक अमेरिकी साइंसदाँ और माहिर–ए–तबइयात (चीलेपबपेज) है, वो कहता है: "अगर कायनात ख़ुद अपने आप को पैदा कर सकती है तो इसका मतलब यह है कि वो अपने अंदर ख़ालिक़ के औसाफ़ रखती है, ऐसी सूरत में हम यह मानने पर मजबूर हैं कि कायनात ख़ुद एक ख़ुदा है। इस तरह अगरचे हम ख़ुदा के वजूद को तस्लीम कर लेंगे लेकिन वो निराला ख़ुदा होगा जो बयक वक़्त माफ़ौक़–उल–फ़ितरत भी होगा और माद्दी भी। मैं इस तरह के मोहमल तसव्वुर को अपनाने के बजाय एक ऐसे ख़ुदा पर अक़ीदे को तरजीह देता हूँ जिसने आलम–ए–माद्दी की तख़लीक़ की है और आलम का वो ख़ुद कोई जुज़्व (हिस्सा) नहीं बल्कि उसका फ़रमाँरवा और नाज़िम व मुदब्बिर है।" (दि इविडेंस ऑफ़ गॉड: 71)
(जारी)

तहरीक-ए-नदवतुल उलमा की जामेईयत

जैनुल आबदीन हाशमी नदवी

इसमें शुब्हा नहीं कि तहरीक–ए–नदवा को इसके संस्थापकों ने जो जामेईयत (व्यापकता) बख़्शी, इसकी बिना पर वह इस लायक़ थी और है कि मिल्लत–ए–इस्लामिया की रहनुमाई का फ़रीज़ा अंजाम दे सके। ज़माने के हक़ीक़ी ख़ला को पुर कर सके और वक़्त के ख़तरों और चौलेंजेज़ का मुक़ाबला करने की ताब ला सके। तहरीक–ए–नदवा की असल बुनियाद ख़ालिस दीनी–ओ–मज़हबी और इल्मी–ओ–फ़िक्री थी जिसके नज़दीक मुसलमानों के पतन का वाहिद सबब उनका सही दीनी तालीम से दूरी था। इस तहरीक में दीन–ओ–शरीअत के हामिल उलमा–ए–किराम को खुसूसी मक़ाम दिया गया था। इसलिए कि तहरीक के नज़दीक उम्मत की हक़ीक़ी क़यादत–ओ–रहबरी का फ़रीज़ा अंजाम देने की सलाहियत इसी तबक़े में थी और है। इस तहरीक का सबसे अहम निशान इसका "पुराना नेक और नया लाभदायक" का नारा था जिसकी रोशनी में इसने रोज़–ए–अव्वल से इस्लाह–ए–निसाब का आलम बुलंद किया। यह तहरीक तारीख़–ओ–तर्जुबे की रोशनी में इस नतीजे पर पहुँची थी कि इंसानी ज़ेहन–ओ–फ़िक्र की तामीर, क़ौल–ओ–अमल का तवाज़ुन और किरदार साज़ी के लिए सबसे पहले एक जामेअ और मेयारी निसाब–ए–तालीम–ओ– निज़ाम–ए–तर्बियत शर्त है। हक़ीक़त में यह वह सांचा है कि इसके अंदर जिस तरह इंसान को ढाल दिया जाए यह वैसा ही ढल जाता है। इस तहरीक के मक़ासिद का सबसे अहम तरीन वह रुक्न भी था जो हिंदुस्तान ही नहीं बल्कि पूरे आलम–ए–इस्लामी के लिए एक अनोखी और दिलचस्प सदा थी यानी "आपसी विवादों को खत्म करना" का नारा।

दरअसल तहरीक–ए–नदवा का मक़सद ऐसे आली–हौसला क़ाइदीन को वजूद बख़्शना था जो "एक हाथ में शरीअत का जाम और दूसरे हाथ में इश्क़ का निहाई" का मिस्दाक़ हों, जिन्हें किताब–ओ–सुन्नत का गहरा इल्म हो, जिनके अंदर अरबी ज़बान की पुख़्ता सलाहियत हो। जिन्हें दीन की गहरी समझ का मलका हासिल हो, जिन्हें हालात के नए–नए चौलेंजेज़ को समझने का फ़हम हो। जिन्हें ज़माने की नब्ज़ शनासी का हुनर हो, जिन्हें अपने दौर की ज़बान–ओ–बयान से वाक़फ़ियत हो, जिनके अंदर तहम्मुल हो और उनका मिज़ाज भी एतदाल का आला नमूना हो, हासिल यह कि वह मदरसा–ए–नुबुव्वत के चश्मा–ए–हैवां से ऐसे सैराब हुए हों कि वह अपने क़ौल–ओ–अमल से ज़माना की चूल बिठा सकें और अक़वाम–ए–आलम में मुसलमानों का मेयार क़ायम कर सकें।

नदवतुल उलेमा ने इस बात पर भी ज़ोर दिया कि मुआसिर ज़बानों से वाक़फ़ियत पैदा की जाए। मुआसिर मज़ाहिब और तहज़ीबों का मुताला किया जाए, बैनुल–मज़ाहिब सतह पर लोगों से गुफ़्तगू की जाए। बुलंद रुतबा उलमा–ओ–मुबल्लिग़ीन– ओ–दुआत तैयार किए जाएं और ऐसा लिट्रेचर भी लिखा जाए जो इस्लाम का शारह–ओ–तर्जुमान हो और इसके ज़रिया दीन का असल मिज़ाज समझा जा सके। तहरीक–ए–नदवतुल उलेमा ने यह भी तय किया था कि इन कामों के लिए "इशाअत–ए–इस्लाम" का एक शोबा क़ायम किया जाएगा, जिसकी तमाम ज़िलों में शाख़ें होंगी और उनके तहत जगह–जगह वअज़–ओ–इरशाद का काम किया जाएगा और ऐसे मुअल्लिमीन भी रखे जाएंगे जो गाँव–गाँव इस्लामी अक़ाइद–ओ–आमाल की तब्लीग़ कर सकें और हिंदुस्तान में इस्लाम की जड़ें मज़बूत करने में मुआविन साबित हो सकें।

तहरीक–ए–नदवा की मिन–जुमला इन तमाम खुसूसीयात में "रफ़अ–ए–निज़ा–ए–बाहमी" का नारा सबसे मुमताज़ है, जिस ज़माना में नदवा ने यह सदा लगाई उस वक़्त इस्लामियान–ए–हिंद का मिज़ाज–ओ–मज़ाक़ तक़रीबन अपनी असल से हट चुका था, चंद ज़ाहिरी फ़िक़्ही इख़्तलाफ़ात को असल दीन समझ लिया गया था, दीनी मुज़ाकरा–मुजादला (बहस) में तब्दील हुआ, यहाँ तक कि मुजादला से मुक़ातला (लड़ाई) तक की नौबत पहुँच चुकी थी, हालत यह थी कि हर फ़िक़्ही मकतब–ए–फ़िक्र का सारा ज़ोर काफिर ठहराने और अपमानित करने पर ही सर्फ़ होता था, अल–ग़रज़ जमाअती पक्षपात और फ़ुरूई इख़्तिलाफ़ात ने मिल्लत–ए–इस्लामिया हिंदिया के बदन को कमज़ोर कर रखा था और मिल्लत की एनर्जी बे–ज़रूरत कामों में ख़र्च हो रही थी।

नदवा की पहले दिन से यही सदा है कि मक़सदियत पर तवज्जो दी जाए, दावत के काम में नबवी तरीकों को पेश–ए–नज़र रखा जाए, एतदाल और अख़्लाक़ के तवाज़ुन को जमा किया जाए, ज़बान को साफ़ और किरदार को शगुफ़्ता (खिला हुआ) बनाया जाए, वसाईल (संसाधनों) को मक़ासिद के लिए इस्तेमाल किया जाए, किताब–ओ–सुन्नत और इज्मा–ए–उम्मत को हुज्जत माना जाए। अफ़सोस की बात है कि जज़बातियत के इस दौर में बाज़ अहल–ए–इल्म हलक़ों से भी ऐसे रद्द–ए–अमल का इज़हार होता है जिससे पता चलता है कि वह तारीख़ और खुसूसन तारीख़–ए–नदवा से वाक़िफ़ नहीं।

हम हैं तो खुदा भी है

मुहम्मद मुसअब नदवी

जिस ज़माने से दुनिया की तारीख़ मालूम है तब से दुनिया के हर हिस्से में खुदा का एतिक़ाद मौजूद है। इल्म–उल–इंसान (Anthropology) के माहिरों ने इस पर बहस की है कि इंसान जब बिल्कुल फ़ितरी था यानी तहजीब व तमद्दुन, उलूम व फुनून का बिल्कुल भी वजूद नहीं था तो उसने सबसे पहले किसकी परस्तिश की? किसी बुत की या फिर खुदा की? तमाम मुहक़्क़िक़ीन ने यह बात कही है कि इंसान ने पहले खुदा की परस्तिश की है, इंसानों ने खुदा के आगे उस वक़्त सर झुकाया था जब वो खुदा का नाम भी न रख सके थे।

हक़ीक़त यह है कि खुदा का ऐतराफ़ इंसान की असल फ़ितरत में दाख़िल है। खुदा ने इंसान की फ़ितरत ही ऐसी बनाई है कि उसे हर हाल में खुदा की खुदाई को मानना पड़ता है। जब कश्ती मंझधार में हो, बीमारी जान लेवा बन जाए, या कोई और मुसीबत सामने खड़ी हो, उस वक़्त हर इंसान किसी अनदेखे सहारे को पुकारता है, हर बे–सहारा मज़लूम को किसी अज़ीम ताक़त की जानिब से मदद की उम्मीद होती है। यही उम्मीद, यही एहसास–ए–रुबूबियत इंसानी फ़ितरत में रखी गई है। यह वो फ़ितरत है जिसको कुरआन–ए–करीम इस अंदाज़ में बयान करता है:

وَإِذْ أَخَذَ رَبُّكَ مِن بَنِىٓ آدَمَ مِن ظُهُورِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَأَشْهَدَهُمْ عَلَىٰٓ أَنفُسِهِمْ أَلَسْتَ بِرَبِّكُمْ قَالُوا۟ بَلَىٰ شَهِدْنَا

"और जब तुम्हारे परवरदिगार ने आदम के बेटों की पुश्त से उनकी सारी औलाद को निकाला था और उनको खुद अपने ऊपर गवाह बनाया था (और पूछा था कि) क्या मैं तुम्हारा रब नहीं हूँ? सब ने जवाब दिया था कि क्यों नहीं?! हम सब इस बात की गवाही देते हैं।" (सूरह आराफ़: 172)

मगर कभी–कभी यह फ़ितरी एहसास ज़ाहिरी चीज़ों की वजह से दब जाता है। इसीलिए सिर्फ़ इस पर इक्तिफ़ा (बस) नहीं किया गया बल्कि महसूस की जाने वाली चीज़ों से इस्तदलाल (तर्क) पेश किया गया है और इंसान से कहा गया कि वो अपनी ज़ात पर, निज़ाम–ए–कायनात पर ग़ौर करे। जब इंसान अपने वजूद पर नज़र करता है, ज़मीन की कशिश और आसमान की बुलंदियों को देखता है, रात और दिन, सूरज और चाँद का मुशाहिदा करता है, तो बे–इख़्तियार उसका दिल पुकारता है, उसका ज़हन कायनात की वुसअतों में सवाल करता है:

"वह पूछता है कि ऐ ज़मीन! किसने तुझ पर ख़ाक का फ़र्श बिछा कर तुझ को क़िस्म–क़िस्म के दरख़्तों से, पहाड़ों से, रंग–बिरंगे फूलों से आरास्ता किया है और तेरी छत को कुब्बा–हा–ए–नूर से मुरस्सा (सजाया) किया है? ऐ पुर–रौब समुंदर! तेरी मौजें ग़ज़बनाक होकर ज़मीन को निगल जाना चाहती हैं, फिर क्यों तेरी मौजों का ज़ोर एक हद से आगे नहीं बढ़ पाता? किसने तुझ को क़ैद कर रखा है? ऐ रात की तारीकी! मुझे बताओ किसने तुझे पुर–लुत्फ़ बना दिया है। ऐ आसमानों! मुझ को ख़बर दो, किसने तुझे वुसअत बख़्शी है, बग़ैर सुतून (खंभे) के तू किस क़दर बुलंद है? किस क़दर इज़्ज़त–मआब है, यक़ीनन तेरा कोई ख़ालिक़ है तेरा कोई सानेअ (बनाने वाला) है। ऐ बे–इंतिहा सितारों! बोलो वो किसका हाथ है जिसने तुम को उफ़क़ में थाम रखा है? ऐ मेहर–ए–ताबाँ और आफ़ताब–ए–दरख़्शाँ! तुम किसकी अदा–ए–ताअत के लिए मुहीत के पर्दे से बाहर निकलते हो और सारे आलम पर अपनी किरणें बिखेर कर रोशनी फैला देते हो?

यह सब किसके हुक्म पर है? ज़रूर कोई ज़बरदस्त ताक़त है जो यह सब करवा रही है। यह ज़मीन की गर्दिश, रात और दिन का आना जाना, हवाओं का

चलना, बादलों का बरसना, फ़सलों का उगना, यह सब महज़ इत्तिफ़ाक़ नहीं हो सकता, अक़्ल–ए–सलीम इसको हरगिज़ क़बूल नहीं कर सकती है। यह मुनज़्ज़म कायनात, यह हैरत अंगेज़ तरतीब, यह बे–मिसाल तवाज़ुन (Balance), यह सब बता रहे हैं कि इनके पीछे किसी हकीम का इरादा कारफ़रमा है। जब किसी जगह कई चीज़ें बे–तरतीब नज़र आएँ तो यह ख़्याल हो सकता है कि ख़ुद से हो गई होंगी, मगर वही अगर तरतीब व निहायत सलीक़े से चुनी गई हों कि कोई माहिर से माहिर कारीगर भी ब–मुश्किल इस तरह तरतीब दे सकता है, तो यह ख़्याल कभी नहीं होगा कि आप से आप यह चीज़ें तरतीब पा गईं। अगर किसी मामूली आदमी को रूमी की कोई ग़ज़ल उलट–पलट कर पकड़ा दी जाए और कहा जाए कि इन अल्फ़ाज़ को तरतीब दो, वो हज़ारों तरह से कोशिश करेगा मगर एक बार भी इत्तिफ़ाक़ी तौर पर रूमी की वही ग़ज़ल नहीं बन सकेगी जबकि हुरूफ़ वही, अल्फ़ाज़ और जुम्ले वही। तो यह कैसे मुमकिन है कि निज़ाम–ए–आलम जो इस क़दर मुरत्तब व मौज़ूँ है वो ख़ुद क़ायम हो गया।

صُنْعَ اللَّهِ الَّذِیْ أَتْقَنَ كُلَّ شَیْءٍ

"यह ख़ुदा की कारीगरी है जिसने हर शै को ख़ूब पुख़्ता तौर पर बनाया है।"

مَّا تَرَى فِیْ خَلْقِ الرَّحْمَنِ مِن تَفَاوُتٍ فَارْجِعِ الْبَصَرَ هَلْ تَرَى مِن فُطُورٍ

"ख़ुदा की कारीगरी में तुम को कहीं फ़र्क़ नज़र नहीं आएगा फिर दोबारा देखो कहीं दरार नज़र आती है?"

خَلَقَ كُلَّ شَیْءٍ فَقَدَّرَهُ تَقْدِيْراً

"ख़ुदा ने हर शै को पैदा किया फिर उसका एक अंदाज़ा मुअय्यन किया।"

لَا تَبْدِيْلَ لِخَلْقِ اللَّهِ

"ख़ुदा की तख़लीक़ में रद्दो–बदल मुमकिन नहीं।"

इन आयतों से साफ़ ज़ाहिर हुआ कि आलम बे–नक़्स है, कामिल है और मौज़ूँ और मुरत्तब है। जो ऐसा होगा वो ख़ुद नहीं बल्कि किसी साहिब–ए–क़ुदरत ने उसको पैदा किया होगा। जिनके दिल हक़ीक़त–ए–हाल से ग़ाफ़िल हैं, उन पर पर्दे पड़े हैं, वो ख़ुदा का इंकार कर बैठते हैं। यह कोई नया ख़्याल नहीं बल्कि हर ज़माने में ऐसा गिरोह मौजूद रहा है जो ख़ुदा के वजूद का या तो मुनकिर था या शक में रहा है। आज ज़माना बहुत तरक़्क़ी कर चुका है, साइंस और फ़लसफ़ा उरूज पर है, मगर आज के मुलहिदीन भी ख़ुदा के इंकार पर कोई नई दलील क़ायम नहीं कर सके। तमाम मुलहिदीन क़दीम हों चाहे जदीद, सबके दलाइल का खुलासा यही है कि ख़ुदा का कोई सुबूत नहीं मिलता, माद्दा (Matter) के सिवा आलम में और कोई मौजूद नहीं, ख़ुदा के बग़ैर निज़ाम–ए–आलम का सिलसिला क़ायम हो सकता है; और ज़ाहिर है यह कोई इस्तदलाल नहीं बल्कि अदम–ए–इल्म (जानकारी की कमी) का एतिराफ़ है। मुतकल्लिमीन–ए–इस्लाम ने मुलहिदीन के तमाम एतिराज़ात को तफ़सील से नक़्ल किया है। अलामा इब्ने हज़्म ने अपनी किताब "मिलल व निहल" में सब एतिराज़ात को नक़्ल करके निहायत तफ़सील से उनके जवाबात लिख दिए हैं।

यह तो इल्म–उल–कलाम का मसला है। आज जबकि दुनिया के हज़ारों राज़ फ़ाश हो चुके हैं, हक़ाइक़ ने अपने रुख़ से नक़ाब को हटा दिया है, बड़े–बड़े हुकमा और फ़लासिफ़ा ने इंतिहाई ग़ौर व फ़िक्र के बाद ख़ुदा के वजूद में वही दलाइल पेश किए जो आज से चौदह सौ साल पहले क़ुरआन–ए–करीम निहायत आसान, आम–फ़हम उस्लूब और साफ़ तरीक़े से अदा किया था।

कैमिल फ़्लेमेरियन (Camille Flammarion) लिखते हैं:

"तमाम असातिज़ा इस बात को समझने से क़ासिर (बेबस) हैं कि वजूद क्योंकर हुआ और क्योंकर बराबर चलता चला जाता है, इसी वजह से उनको मजबूरन ऐसे ख़ालिक़ को मानना पड़ता है जिसका मुअस्सिर (Effective) होना हमेशा और हर वक़्त क़ायम है।"

प्रोफ़ेसर लेनी कहते हैं:

"ख़ुदा–ए–क़ादिर व दाना अपनी अजीब व ग़रीब कारीगरियों से मेरे सामने इस तरह जल्वा–गर होता है कि मेरी आँखें खुली की खुली रह जाती हैं और मैं बिल्कुल दीवाना बना जाता हूँ, हर चीज़ चाहे वो कितनी छोटी हो, उसमें किस क़दर अजीब क़ुदरत, किस क़दर अजीब हिकमत, किस क़दर अजीब ईजाद पाई जाती है।"

दावत की अहमियत और उसके तक़ाज़े

मुहम्मद अरमग़ान बदायूनी नदवी

यह एक मुसल्लमहा हकीक़त है कि चीज़ों के ख़्वास कभी नहीं बदलते, पानी का काम है प्यास बुझाना, ज़हर का काम है हलाक करना और चाक़ू का काम है काटना। ठीक इसी तरह तारीख़ अक़्वाम–ए–आलम का मुताला हमें यह बताता है कि इस दुनिया में एक चीज़ हमेशा ऐसी रही है जिसकी तसीर, अहमियत और नाफ़ेईयत से किसी ज़माने में इंकार नहीं किया गया है और वह है "कार–ए–दावत"।

वाक़्या यह है कि क़ौमों की ज़िंदगी में इसकी हैसियत आब–ए–हयात से कम नहीं। अल्लाह तबारक व तआला ने इस काम में गैर–मामूली ताक़त रखी है। हक़ीक़त में यह एक ऐसा मुबारक और गैर–मामूली अमल है जिससे इस कायनात की कोई ताक़त मुक़ाबला करने से क़ासिर है। ज़माना चाहे कितना ही तरक़्क़ी कर जाए और इंसान चाहे कितना ही सभ्य हो जाए लेकिन दावत की माना–खेज़ी से इंकार नामुमकिन है। सच्ची बात यह है कि कुछ मौक़ों पर इसके मुक़ाबले में फ़ितरी चीज़ों के ख़्वास भी तब्दील हो जाते हैं। अगर दावत की राह में आग हाइल हो तो गुलज़ार बन जाती है, अगर समंदर हाइल हो तो रास्ते छूट जाते हैं, अगर चाक़ू या ज़हर सामने हो तो उनकी हक़ीक़त भी सलब हो जाती है।

अल्लाह तबारक व तआला ने हर इंसान को फ़ितरी तौर पर यह इख़्तियार दिया है कि इस दुनिया में वह ख़ैर की तरफ़ माइल होता है या बुराई को पसंद करता है, और इसका लाज़मी नतीजा यह है कि इंसानी समाज बदअनवाइयों का शिकार होता है, बे–हयाई में मब्तिला होता है, ज़ुल्म बढ़ता है और ख़ुदा–बे–ज़ारी का एक आम माहौल पैदा होता है। यही वे ख़राबियाँ हैं जिन्हें दूर करने के लिए हर दौर में अल्लाह ने अपने पैग़ंबर भेजे जिन्होंने इंसानों को इंसानियत का सबक़ दिया और ख़ालिक़ को मख़लूक़ से जोड़ने का काम किया। आख़िर में जब ज़ुल्म व जफ़ा हद से गुज़र गया और पूरी इंसानी सोसायटी एक सड़े हुए लाश की तरह हो गई, तब हादी–ए–आलम महसिन–ए–इंसानियत हज़रत मुहम्मद (स0अ0व0) इस दुनिया में तशरीफ़ लाए और आप (स0अ0व0) की आमद से पूरी दुनिया को एक नया रुख़ नसीब हुआ और इंसानियत के तने मुर्दा में एक नई रूह दौड़ गई। आप (स0अ0व0) के बाद इस्लाह व इर्शाद की यह ज़िम्मेदारी उम्मत मुस्लिमा के सुपुर्द कर दी गई और यह एलान कर दिया गया कि दुनिया में तुम्हारी बक़ा व ख़ुलूद और इज़्ज़त व तक़रीम का राज़ दावत के अमल से वाबस्तगी में है। अगर तुम ने यह फ़र्ज़ अंजाम न दिया या तुम ग़फ़लत का शिकार हुए तो याद रखना किः

"अगर तुम ने ऐसा न किया तो ज़मीन में फ़ितना और बड़ा फ़साद हो जाएगा।"

वाक़्या यह है कि मुसलमानों के लिए इस फ़र्ज़ से एक लम्हा की ग़फ़लत भी ख़ुदकुशी के बराबर है। रिवायतों में आता है कि जब सहाबी (रज़ि0) ने मदीना में हालात नॉर्मल महसूस किए तो अपने कुछ ज़ाती कामों की तरफ़ रुख़ का इरादा किया लेकिन इसी मौक़े पर यह आयत नाज़िल हुईः

"और अपने हाथों हलाकत में मत पड़ो।"

इसमें कोई शक नहीं कि अक़्वाम–ए–आलम के दरमियान उम्मत मुस्लिमा की बैत का मक़सद न तिजारत था न ज़राअत (खेती), न हिरफ़त था न हुकूमत बल्कि उनका असल मक़ाम व मंसब वह दाइयाना किरदार था जिसके ज़रिए इंसानी समाज अमन का गहवारा बनता है और ख़ालिक़–ए–हक़ीक़ी की मारिफ़त का मिजाज़ पैदा होता है।

क़ुरआन मजीद जो ख़ास तौर पर तमाम अहल–ए–ईमान के लिए एक राह–नुमा किताब है, इसके अक्सर मज़ामीन और इसमें बयान किए गए अम्साल व क़िस्सों का बुनियादी मौज़ू यही है कि उम्मते मुस्लिमा दावत के तईं अपने अंदर हस्सासियत पैदा करे और अपने मंसब को समझे।

यह भी तन्हा मज़हब इस्लाम ही की ख़ूबी है कि इसने मुसलमानों को जिस क़दर दावत से वाबस्तगी की ताक़ीद की है, उतना ही उन्हें आज़ाद भी रखा है। किताब व

सुन्नत में हमें दावत के वे सुनहरे उसूल ज़रूर मिलते हैं जिन्हें बुनियाद बनाकर हम राह–ए–रास्त से दूर नहीं हो सकते लेकिन मुसलमानों को दावत व तब्लीग़ की कोई एक मुतअय्यन व महदूद राह का मुकल्लफ़ नहीं बनाया गया। इसकी बुनियादी वजह यह है कि ज़मां व मकां के तग़य्युर से हर दौर में लोगों के मिजाज व मज़ाज़ में तबदीली वाक़ई होती रहती है। ऐसी सूरत में अगर किसी एक ही तरीक़े का मक्लूफ़ बनाया जाता तो शायद दुश्वारियां होतीं। इसलिए किताब व सुन्नत में कुछ बुनियादी उसूल ही पर एक्तिफ़ा किया गया है जो यक़ीनन रहती दुनिया तक के लिए भरपूर और काफ़ी हैं।

दावत का दायरा न तक़रीर व तहरीर में महदूद है, न वअज़ व तज़कीर में, न मदरसा की चहारदीवारी में और न तब्लीग़ की मौजूदा शक्लों में, न तश्कीलात में और न जमाअतों में। बिला–शुब्हा यह सब चीज़ें दावत के वसील, दीन की ख़ादिम और वक़्त की एक ज़रूरत हैं, ताहम दावत दीन के यही तरीक़े नहीं हैं बल्कि कुरआनी उसूल की रौशनी में इस सिलसिले में ज़माना व मकां की तब्दीली के साथ अलग–अलग शक्लें इख़्तियार की जाती रहेंगी। दावत के सिलसिले में सबसे बुनियादी बात यह इर्शाद फ़रमाई गई कि

"अपने रब के रास्ते की तरफ़ हिकमत और अच्छी नसीहत के ज़रिए बुलाते रहिए और अच्छे तरीक़े पर उनसे बहस कीजिए।" (सूरह नहलः 125)

दावत का यह वह बुनियादी उसूल है जो तमाम अंबिया (अलैहिमुस्सलाम) और बतौरे ख़ास हज़रत (स0अ0व0) की हयात–ए–तय्यिबा में सबसे ज़्यादा नुमूदार है। दरअस्ल दानिश–मंदी, मौक़ा–शनासी व मिजाज–शनासी और हुस्न–ए–करदार व गुफ़्तार वह जौहर है जो मुहातिब की नफ़्सियात पर बराह–ए–रास्त असरअंदाज़ होता है। इसलिए मुसलमानों से यह मुताल्बा है कि उनका तर्ज़–ए–ज़िंदगी बजा–ए–खुद ऐसा दीदा–ए–ज़ेब होना चाहिए जो ग़ैर–शुऊरी तौर पर ज़हनों को अपील करता हो। इसके इलावा मौअज़ह–हसना का ज़र्रीं उसूल भी हर दौर में मुसल्लम रहा है और कुछ मौक़ों पर एक वअज़ पूरी क़ौम की तक़दीर बदलने का सबब बना है। ताहम कुछ जगहों पर जिदाल मगर वह भी अहसन अस्लूब में मुफ़ीद होता है। जिदाल में अहसन की शर्त यह पैग़ाम देती है कि एक मुसलमान को हर हाल में अपने शुऊर व जज़बात पर क़ाबू रखना मतलबह है और बेदार–मग़ज़ी के साथ इस फ़र्ज़ को अदा करना है।

कुरआन मजीद के मुतालए से मालूम होता है कि यह काम महज़ नक़ूश और रस्मी ख़त्तूत पर नहीं होता बल्कि कार–ए–दावत के लिए दिल के अंदर एक तड़प और कढ़न भी ज़रूरी है। एक दाई के लिए यह भी ज़रूरी है कि मज़हब इस्लाम पर उसे पूरी तरह इन्शिराह हो और उसके मुक़ाबले में दुनिया की हर आवाज़ और पर–फ़रेब नारा उसके लिए बे–हैसियत हो। इसलिए कुरआन मजीद में बार–बार यह उसूल बयान किया गया है कि हर दाई को इंसानियत के हक़ में ख़ैरख़्वाह और अमानतदार होना नाजिर है। दावत के काम में नर्म–मिजाज़ी की भी बड़ी अहमियत है। फ़िरऔन जैसे ज़ालिम व जाबिर के दरबार में जाने से पहले ख़ुसूसियत के साथ हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को इस वस्फ़ की तलकीन की गई और इसमें क्या शक है कि हज़रत (स0अ0व0) की ज़िंदगी का तो यह अम्तियाज़ी वस्फ़ था। दावत के मयदान में जज़बातियत से दूर, सब्र व इस्तिक़ामत के वस्फ़ से अपनी ज़िंदगी को आरास्ता करना भी निहायत ज़रूरी है। इसके इलावा हालात और अपने मुहातिबीन की नफ़्सियात और उनकी ज़रूरतों का भी इल्म होना चाहिए।

अल्लाह तबारक व तआला ने दावत के काम में बड़े मुनाफ़ेआत पोशीदा रखे हैं। अगर यह काम कोई फ़र्द अंजाम दे तो उसे महबूबियत अता होती है ताहम अगर यह फ़र्ज़ मिन–हैसुल–क़ौम अंजाम दिया जाए तो दुनिया की तमाम क़ौमें इसे अपने सर का ताज समझती हैं। यही वह मुबारक काम है जो समाज से बुराइयों का ख़ातमा करता है, ज़िंदगी को पुर–सुकून बनाता है, इंसानों के दरमियान रिश्तों को मज़बूत करता है, ज़ुल्म व जफा को दूर करता है, बदअनवाइयों पर रोक लगाता है और एक मिसाली इंसानी समाज को वजूद बख़्शता है। यह वह अहम काम है जो इस वक़्त दुनिया की सबसे बड़ी ज़रूरत है। सच्ची बात यह है कि आज दुनिया की तमाम क़ौमें अमन की मुतलाशी हैं, एक सच्ची और अच्छी ज़िंदगी की चाहने वाली हैं मगर वे तही–दामन हैं। वे तमाम तर तरक़्क़ियात, ईजादात व इक़्तिशाफ़ात और ज़र व दौलत की फरावानी के बावजूद इस मता–ए–अज़ीम से महरूम हैं लेकिन मुसलमान इस दौलत से मालामाल हैं और इस सिलसिले में पूरी तरह से खुद–कफ़ील भी। खुदा करे कि उनमें अपने मक़ाम व मंसब की बेदारी की लहर पैदा हो और वे इख़्लास व ख़ैरख़्वाही के साथ इस मयदान में आगे बढ़कर इंसानियत को नजात का रास्ता अता करें।

हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिए एक लाएहा-ए-अमल

फ़िक्रे अबुल हसन की रोशनी में

"हिंदुस्तान की यह ख़ासियत रही है कि यहाँ जो क़ौम आई वह ज़म (विलीन) हो गई, जो तहज़ीब आई वह मिट गई, इसी वजह से हिंदुस्तान को "अक्कालुल उमम" (क़ौमों को खा जाने वाला) कहा जाता है। यह सरज़मीन क़ौमों और तहज़ीबों का मदफ़न (क़ब्रिस्तान) रही है। ऐसे मुल्क में मुसलमान अपने मिल्ली तशख़्ख़ुस (क़ौमी पहचान) और दीनी इम्तियाज़ (धार्मिक विशेषता) के साथ कैसे रह सकते हैं?! इसके लिए मुफ़क्किर-ए-इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०) ने चार चीज़ों को ज़रूरी क़रार दिया है:

(१) मकातिब का क़याम ताकि दीन नई नस्लों तक मुंतक़िल (स्थानांतरित) होता रहे।

(२) तहरीक-ए-इस्लाह-ए-मुआशरा (समाज सुधार आंदोलन) ताकि मुसलमानों को उन मुशरिकाना रस्म-ओ-रिवाज से बचाया जा सके जो ग़ैर-मुस्लिमों से इख़्तिलात (मेल-जोल) की वजह से उनमें सरायत करते (घर करते) जा रहे हैं।

(३) मुस्लिम पर्सनल लॉ की हिफ़ाज़त ताकि शरई पारिवारिक क़ानूनों में हुकूमत की दख़ल-अंदाज़ी को रोका जा सके और मुसलमानों को इस बात की तरग़ीब (प्रेरणा) दी जाए कि वह अपने सारे मसाइल और मामलात शरई क़ानून के मुताबिक़ हल करें।

(४) तहरीक-ए-पयाम-ए-इंसानियत जिसका मक़सद ग़ैर-मुस्लिमों के ज़ेहनों को साफ़ करना, इंसानियत के एहतिराम की बात करना, इंसानी क़द्रों को फ़रोग़ (बढ़ावा) देना, इंसान को उसका मक़ाम-ओ-मर्तबा याद दिलाना और इस्लाम और मुसलमानों के बारे में पाए जाने वाले शक-ओ-शुब्हात का इज़ाला (निवारण) करके माहौल को पुर-अमन बनाने की कोशिश करना।

हज़रत मौलाना इन चार कामों को हिंदुस्तानी मुसलमानों के लिए ज़रूरी समझते थे और अमली तौर पर इन कामों में भरपूर हिस्सा लेते थे, दीनी तालीमी काउंसिल हो, या मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड हो, या इस्लाह-ए-मुआशरा की तहरीक हो, या पयाम-ए-इंसानियत का मिशन! हज़रत मौलाना इन सबके दाई (बुलाने वाले) नहीं बल्कि रूह-ए-रवां (मुख्य प्रेरणास्रोत) थे।"

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी (रह०)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 01 ❋ January 2026 ❋ Volume: 18

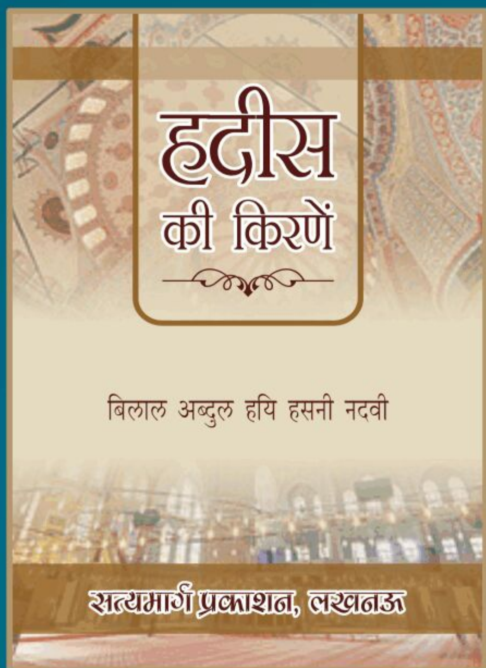

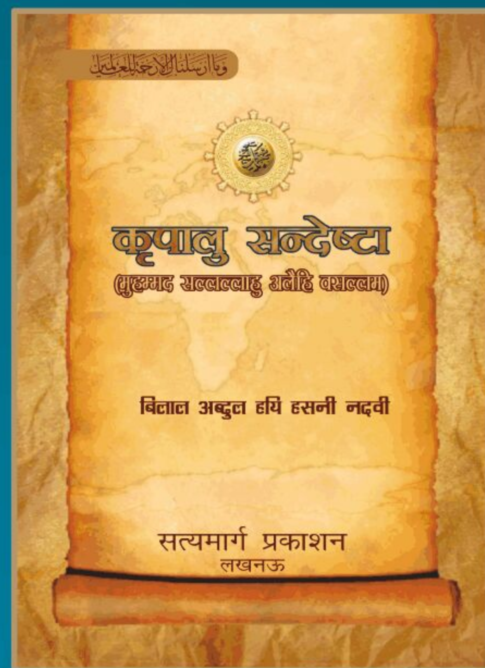

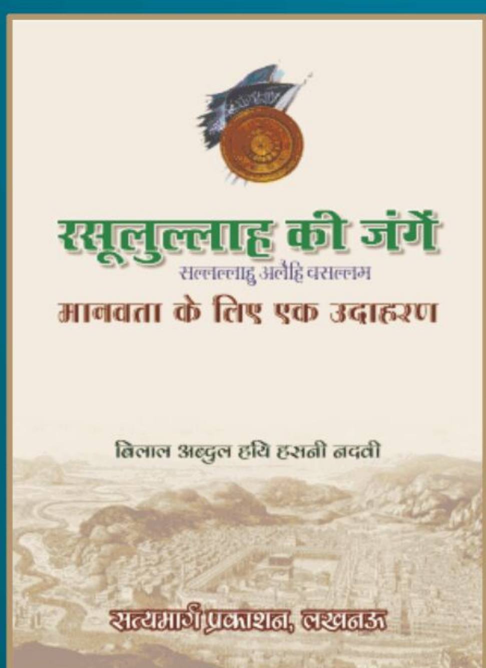

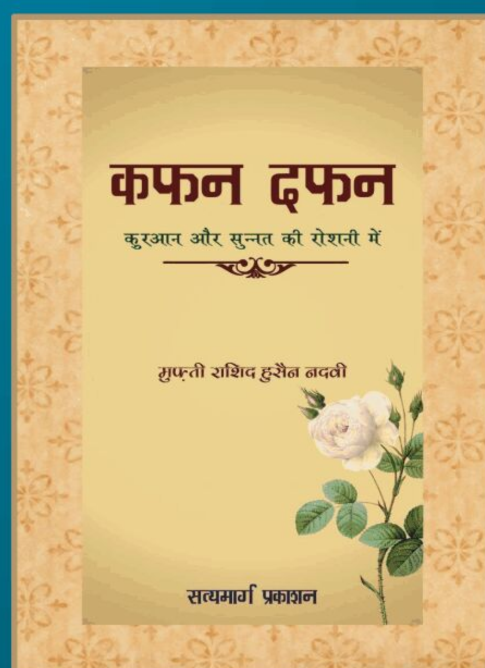

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi

MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.